© लेखक प्रकासक १ प्राप्ट्य भारती संस्थान, जयपुर (राजस्यान)

प्राप्तिस्थान

नरेन्द्रकुमार सागरमल सराका, धालापुर (म॰ प्र॰)

२ मोतीलाल बनारसीदास, चीक बाराणसी-१

१. पारवनाय विद्यायम शोध-सस्यान, आई० टी० आई० रोड, बाराणसी-५

 प्राहृत भारती सस्यान, वित स्वामलालजी का उपाथम, मोदीसिंह सोमियों का रास्ता, जयपुर-३०२००२

प्रकाशन वर्ष सन् १९८२

बीर निर्वाण सं॰ २५०८

तस्य : होतह दाये वान

प्रकाशकीय

प्राष्ट्रत भारती मंस्यान, बयपुर. (राजस्थान) के द्वारा 'जैन, बौढ और मीता का समाज दर्शन' नामक पुरतक प्रकाशित करते हुए हमें लगीव प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

कान के मुण में नित्य सामाधिक चैतना, सहित्युता जोर सह-करितव्य में आवश्यक्ता है, उसके किए बारों का समाम्बाराम्ब मृष्टि है निय्यात पुन्तास्यक अध्ययन अभिवत है, तिस्यात्म के मिन कुछ के माम्बाराम्ब मृष्टि है निय्यात पुनतास्यक अध्ययन अभिवत है। तिस्यात्म के भी मृष्टि के मिन मुण्य समस्य जीवन की तक्षेत्र के किए मृष्टि किए मृष्टि विद्यात्म के निर्देशक स्थापार वर्षों में एन एक बृह्दकार सीम्थ्यक्त आत्र के तमन्य पर पर्यों पर एक बृह्दकार सीम्थ्यक्त आत्र के तमन्य पर पर पर्यों कि सामा प्राप्त के सम्माप्त प्रकृत का स्वार्य के स्वर्ण के स्वर्ण के समान प्रमुख कि सम्माप्त प्रकृत का स्वर्ण के सामाप्त का प्रमुख कि स्वर्ण के स्वर्ण

प्राइत भारती द्वार इसके पूर्व भी भारतीय बार, अधारणास्त्र एवं प्राइत भारती है। इसकी की प्रकारत है। इसकी है। इसकी इस में यह उसका रेवाँ प्रकारत है। इसकी प्रकारत में यह उसका रेवाँ प्रकारत है। इसके प्रकारत में यह अपने की प्रकारत में यह अपने की प्रकारत में यह की लिए इस वसके आभारी है। महावीर प्रेश में अपने इसे में मुगर्य एवं करायूर्ग इसे के पूर्व किया, एउटमं इस वनके भी आभारी है।

बेवेन्द्रराज मेहता विनयसागर संनिद संपृक्त सचिव प्राकृत जारती सस्यान, जवपुर (राजस्यान)

Ald may time and im.

गा है। बाद के दूर में रेस करण रिक् है उनके रिल करते हैं। करणकर रूप में के बाद के बीच करते हूं। कर में के बाद में रोग है। करते हैं।

द्वं बाराने व वर्तनांत के प्राप्त के व के बारण पानी पर त्व प्राप्त का का का की के मानी के मान

आपूर बर रहे हैं गर्नड में उनके कार अपन बारती कार करते हैं है के हैंदे कारों का उक्तान के कार है नके अक्तान में हमें केवल का लिए करते हैं बारती है। कारों

वातारी है। बहुदेश देश हैंगा कर ह मूर्व किया, कुमूर्व हैंगा के मूर्य के हर मूर्व किया, कुमूर्व हम सम्बंध में अमूर्य

प्रकाशकीय

प्राहत भारती संस्थान, बयपुर, (राजन्यान) के द्वारा 'जैन, बौड और भीता वा समाज दर्गन' नायक पुरनक प्रवासित वस्ते हुए हमें बतीव प्रयन्तता वा अनुभव हो रहा है।

साय के गुण में जिल पामानिक ने तमा, तारिण्युका कोर सह-कांटिक की सावस्यवार है, जाने मिल पामी वा सावस्वाराक होंग्य है किया मुननारक कार्याय कांग्रिक होता कांग्रिस माना के बीच करती हुई माने चे बाद जा हो की कोर मुख्य अगरण बीचन की छो । इस होटिक हो में स्वार्थ कर कीर में स्वार्थ की कीर मुख्य अगरण बीचन की होता है । हमें कांग्रिस कीर नेपास के निरंपक एवं साराधिक कीर-पाम के माने कांग्रिस कीर कांग्रिस कीर माने कीर माने कीर कांग्रिस कीर माने कीर माने कीर कीर माने माने कीर माने माने कीर माने माने कीर माने क

प्राप्त कारती द्वारा शतने दुन भी कारतीय नवी, नानारणान एवं व्याप्त कारते के हैं इसके हैं है सभी ना प्रयासन है। नुमा है, जाती कम में यह बनाना देशवे प्रयासन है। इसके करायत में हमें नेमक ना दिश्य नवीं में जो गढ़दोर मिना है। बनके लिए हम उनके कारती हैं। बहारीर देश, मेंट्यून ने इसके मूरम नार्य नी नुपार वर्ग नगाउर्ज इस से दुनों हिजा, एटार्य हम बनके भी आसारी है।

> देवेन्द्रराज मेहना विश्वपतागर गवित्र गंदून गवित्र वाहुत जारती संस्थान, जापूर (राजस्थान)

प्राक्कथन

समान रागंत रागंतग्रास्त्र की एक नक्षीन सामा है। प्राक्षीन सामीन स्वीम कोटो, स्वतनु नाहि से अपने सामीनिक किनात में समान में सम्बन्धित सकारात्माओं, माम्यामायों, नियामी एवं निव्यालों का विश्वेचन, विश्वोग्याल पूर्व मुच्योकन को दिला है किन्यु उने क्ष्यान में सामान दर्भ में समान दर्भ में एक रत्यन सामान के क्य में स्वतन नहीं मिला है। वर्शन नग्यान है के स्वतन नग्यान के क्या में विद्यान स्वाम के क्या में विद्याला हुए नग्यान नहीं हुआ है किर भी हमीनिक सामान्य में स्वतान में सिला है। विद्याला माम्यान हो स्वतान में स्वतान कार्यान हो। यही सामान है। वर्शन नग्यान हो। यही सामान है। वर्शन नग्यान नग्यान सिला हमीनिक सामान्य मामान प्रमान के स्वतान मामान स्वतान को स्वतान नग्यान सिला हमीनिक सामान स्वतान स्वतान सामान स्वतान सामान सिला हमीनिक सामान सामान स्वतान सामान सा

भारतीय विश्वत के साहित्य में सामाव चर्यन के विविध पत्तों से साविधित पर्यों के स्थित है। इस्तु इस क्षत्र के साववार के स्थापत के विवध करते वाले कायान में के बिद्ध कराते हैं। इस्तु समय एक कार्त को दिया में एक स्कार वह बेस प्रकार कार्या है। इस स्वाप्त कार्या है। इस साव के देखत हैं। बात साव के से स्वाप्त कार्या कि से सिंद से से साववार कार्या करता है। इस साव के देखत हैं। बात साव के से साव के से साव के से साव के से साव के साव कार्या के साव की साव

भारतीय समाज दर्शन की नियम बस्तु एवं थोक के समुचित निर्वारण न होने के कारण यह कहना कठिन है कि सलुव प्रम्प में मारतीय समाज दर्शन के समस्य पहलुओं को समाचेया हो सदा है अवसा नहीं। फिर भी द्वाना निश्लंकोक कहा का एकता है कि इतमें भारतीय समावराउंन के व्यक्तिश पहनुकों एव समस्याकों का समावेश दिया नमा है। दिवान लेखक ने भारतीय विश्वत के प्राचीन पूर्व को वैदिक पूर्व, कोरिनादीय स्थाप एवं केन बीद पूर्व में विनक कर सामित्र चेतना के विश्वत का विवंतन प्रस्तुत दिया है। स्वार्थ एवं पराचे को अवचारणा में विरोध-दृष्टि पाच्यारा नीतिग्रावतीय विनक्तों को परस्य रिरोधों दो वर्षों में विववंत करती है। हाम्य, मीले आदि स्वार्थ को मानव के तिए एस्स पूर्वपीय मानवर स्वारावत को स्थापना करती है और हो हो नीतिग्रावत के येक एवं समुचित निज्ञान्त होने का दावा -करती है। इतके विश्वतीय विजन, वेन्यम स्वार्थन पराचे ही की रहने विज्ञान्त होने का दावा -करती है। इतके विश्वतीय विजन, वेन्यम स्वार्थन पराचे ही की रहने विज्ञान के पूर्वतक्तिया अवक्रण स्वार्थक पर्यवदा की है। शास्त्रीय विश्वत पार्चा के सी है की रहने विज्ञान के पूर्वावक्तिय अवक्रण समस्यक्षाना है। है। शास्त्रीय विज्ञान करते हैं की रहने विज्ञान के पूर्वावक्तिय अवक्रण समस्यक्षाना है। है। शास्त्रीय विज्ञान करते हैं की रहने विज्ञान को क्षान्य के साथ करी है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था का वाधार स्तम्भ वर्णाधम व्यवस्था है । इसमें महय रूप से वर्णव्यवस्था को वैदिक परम्परा की देन माना जाता है और यह भी भाग्यता देखने को मिलतो है कि श्रमण परम्परा का विकास इस वर्ण व्यवस्था की विरोधी प्रति-किया के रूप में हुआ है। किन्त विदान लेखक ने सप्रमाण यह प्रदेशित किया है कि वर्ण व्यवस्था न केवल ब्राह्मण परम्परा में मान्य रही है अपित समान क्य से यह व्यवण परम्परा में भी स्वीकृत रही है। अन्तर केवल इतना ही है कि जहाँ शहाण परम्परा में वर्ण के निर्धारण की कसौटी के रूप में अन्म एवं कमें सम्बन्धी विवाद बहुत काल तक चलता रहा है वहाँ जैनानायों एवं बीदानायों ने निर्मितार रूप से वर्ण निर्मारण की कसीटी के रूप में कमें की स्वीकार कर लिया है। इसी संदर्भ में स्वयम के निर्धारण का प्रश्न भी अपनी अंटिलता के साथ उपस्थित होता है। वर्ष व्यवस्था को अंपरिवर्तनधील एवं स्पिर मानने वाली वैदिक परम्परा के लिए स्वधर्म की क्याकरा अत्यधिक सहस्र एवं सरल रूप में हो जाती है। वहाँ वर्ष के लिए विहित कमों की वर्णावलम्बी व्यक्ति का स्वधर्म मान लिया जाला है किन्तु वर्ण को परिवर्तनीय एवं अस्विर भाननेवाली जैन एवं बौद परम्परा के लिए स्वधर्म की व्याख्या एक वटिल समस्या का रूप प्रहण कर लेती है। इन सभी प्रश्नों का सेखक ने गम्भीरता से विश्लेषण एवं विवेचन करने का प्रवास किया है।

आरतीय समान दर्धन की मीलिक विश्वेषता के रूप ये टेसक ने शामाजिक नैतिकता के केहीय करन का निवेचन कही सुक्ष कृष्टि के किया है। इसके अन्तर्गत् अहिंगा, अनावह एवं कर्षायह की प्रावना की विशेष महत्व प्रत्या क्षेत्रा है तथा यह रिक्काने का प्रत्या किया है कि शामाजिक चीवन के निवंच आयाणों में इन आवनाओं का उपयोग निवं अकार होता रहा है। शाम ही साथ जामाजिक पर्यं एवं सामाजिक रामिल में हिनी महेने व्यक्ति का वैतिक बन पाना परि अवन्य नहीं तो गहन नामव भी नहीं हैं। आज व्यक्ति और नामकनुषार के लिए एक दोहरे अवन्य को आरायका है। व्यक्ति और सामव दोनों के सुधार के मामुक्तिक अपनों के बिना बाज की दूरिन एवं भाव्य सामाजिक स्थिति से पुरुवारसं पाना असम्पन है। बाज एक और सामजसारी विवास्तान नामाज को अमुस्ता देकर व्यक्ति से गीन

कारण सामाजिक दर्शन में बनेक समस्याएँ उठी हैं। ब्यक्ति और समाज में कीन अपम है यह तो एक विरुत्तन समस्या है ही विज्तु दशके साथ ही जुड़ी हुई दमरी गमस्या है

समाज दोनों के समधेत मुपार के प्रयस्त नहीं होंगे। बस्तुत: ध्यतिन और समाज के बीच ना यह हुन्द्र नाथी पुराना है और इसके

हाय के जबया अध्याय में आरतीय सामाहिक पैदान को स्पष्ट करने का प्रमान किया ज्या है। इसने स्वाप्य में स्वतित और लोकहिक से मायस्या का विवेशन किया गया है। शीवरे कथ्याय में वर्णायम की लक्ष्यार मां है। शीवर्ष कथ्याय स्वाप्य से स्वयुर्व की अवस्पराण पर दिवार दिवार यहा है। शीवर्ष कथ्याय समाज जीवन के आयारापुत दिवाराजों के रूप में बहिता, जनावह (वेशाहिक सहित्या) की स्वार्यरह (बार्षिक समर्थवरण) का विवेषण करता है। जीवरण जयाय में सामाजिक साहित्यों कोर करवार्ष की पत्रों है।

अन्तुत अन्य का अण्यन दाशानक त्रमानक एवं मुपमा आदि पाककाओं में में र प्रकाशित केलों एवं मेरे योग प्रवन्त 'जैन, कोळ और गीता के लाचार दर्शनों का नुकना-रमक एवं समीशारमक अध्ययन' के कुछ अध्यायों को सेकर किया गया है। प्रस्तुत तुष्तरायक बयादन में मुझे बयाध्याय भी बयरपुरियों, मंग्युनमात बी, मंग्युनमात मार्च मात्रविया आदि के राज्यों ने पूर्वात दूरि वियों है, बाद उनने वृद्धि और उनने मार्च मार्च क्रियुन्त में स्वत्या या परोजवण में गाव्योग मिला है उत सबसे प्रति हुए से बाबारों है। बयरी पुरस्त वान गीन भी- कालों एवं बान समित करती के प्रति भी बाजार क्रियु क्रमा मेरा बयरा वर्ताय है। बारों विकास करती के प्रति भी बाजार क्रमा करता मेरा बयरा वर्ताय है। बारों विकास करता करता करता है। बारों विकास करता के एवं निजायालय वान पुत्राय क्रायुन्त मेरा बयरा बार्य करता करता करता है। बारों विकास करता करता है। बारों विकास करता करता है। बारों विकास करता है। बार

बाराणनी, ९-१०-८२

सागरमञ क्षेत

विषय-सूची

8-8 €

\$ E-0 \$

83-88

40-819

अध्याय : १ भारतीय वर्जन में सामाजिक चेत्रजा मारवीय दर्शन में सामाजिक चेवना का निकास (१); वेटों एवं जन-

नियदों में सामाजिक चेतना (२): गीता में सामाजिक चेतना (४): जैन एवं बौद्ध धर्म में सामाजिक चेतना (६), रागालकता और गमाज (८); सामा-

जिक्ता का आधार राग या विवेक ? (१०); सामाजिक जीवन में बावक हरूब बहुंकार भीर कवाव (११); संन्यास और समाज (१२); पृष्कार्य चतप्टय एवं समाज (१३)।

स्वहित बनाम लोकहित अध्याय : २

जेनाबार-दर्शन में स्वार्थ और परार्थ (१८); जैन-नाचना में लोक-हित (१८); तीर्यंकर (१९); गण्यर (२०); सामान्य केवली (२०); आत्म-

हित स्वार्य नहीं है (२१); क्रध्य-लोकहित (२२); माव-लोकहित (२२); पारमापिक-लोकहित (२२), बौद्ध दर्शन की लोकहितकारिणी दृष्टि (२२);

स्वहित और लोकहित के सम्बन्ध में गीवा का मन्तन्य (२९): वर्णाश्रम-व्यवस्था अध्याय : ३

132-22 वर्ण-व्यवस्था (३२), लैनवर्ध और वर्ण-व्यवस्था (३२); बीद्ध आचार दर्शन में वर्ण-अवस्था (३४): बहान कहना शठ है (३५): वर्ण-परिवर्तन

सम्भव है (३६): सभी जाति समान हैं (३६); आवरण ही थेष्ठ है (३६); शीता तथा वर्ण-अवतस्या (३६); आश्रम-पर्ग (४०); जैन-परम्परा भीर आध्यम-सिद्धान्त (४१); बीद-परम्परा और आध्रम-सिद्धान्त (४२);

व्यथमं की अवधारणा अध्याय : ४

गीता में स्वयमं (४३): जीवधर्म में स्वधर्म (४४): तलना (४५): स्व-धर्म का आध्यारियक अर्थ (४६), गीता का दृष्टिकीण (४८); बेडले का

स्वस्थान और उसके कर्तव्य का सिद्धान्त तथा स्वधमें (४९): सामाजिक नैतिकता के केन्द्रोय तन्त्र अध्याय : ५

अहिंसा, अनावह और अपरिचन्न अहिंसा (५१), जैनवर्ग में अहिंसा का स्वान (५१); बौद्धवर्ग में अहिंसा

·का स्पान (५२); हिन्दू धर्म में महिसा का स्थान (५३); अहिसा का

आधार (५४); बौद्धधर्म में अहिंसा का आधार (५६); गीता में अहिंसा के आधार (५६); जैनागमों में अहिंसा की व्यापकता (५७), अहिंसा क्या है ? (५७); द्रव्य एव भाव अहिंसा (५८); हिंसा के प्रकार (५८); मात्र शारी-रिक हिंसा (५८); मात्र वैचारिक हिंसा (५८), वैचारिक एवं धारीरिक हिंसा (५९); शाब्दिक हिंसा (५९); हिंसा की विभिन्न स्थितियाँ (५९), हिसा के विभिन्न रूप (६०), संकल्प जा (संकल्पी हिसा) (६०); विरोधवा (६०); उद्योगजा (६०); बारम्यजा (६०); हिंसा के कारण (६०); हिंसा के साधन (६०); हिंसा और वहिंसा बनोदशा पर निर्मर (६०); महिंसा के बाह्य परा की अवट्रेलना उचित नहीं (६३); पूर्व बहिंसा के बादरों की दिशा में (६४); पूर्व बहिमा सामाजिक सन्दर्भ में (६८); बहिसा के सिद्धात पर मुलनात्मक दृष्टि से विचार (६९); यहूदी, ईसाई भीर इस्लाम धर्म में काहिंसा का अर्थ विस्तार (७१); भारतीय चिन्तन में अहिंसा का अर्थ विस्तार (७१); बहिंसा का विधायक रूप (७५); बीड एव वैदिश परस्परा में अहिंसा का विधायक पक्ष (७६); हिंसा के अल्य-बहुत्व का विचार (७७); अनाप्रह (वैचारिक सहिष्युता) (७९); वैनयम में अनाप्रह (७९); बौद साचार-दर्शन में वैवारिक सनायह (८२); शीता में अनायह (८१) वैवारिक सहित्युवा का बाबार-अनोप्रह (अनेकान्त कृष्टि) (CV); वार्षिक सहित्युवा (८५); धर्म एक या अनेक (८५), अनुवित कारण (८६); उवित कारण (८६); राजनैतिक सहिष्णुता (८८); सामाजिक एव पारिवारिक सहिष्णुता (८९); अनायह की अवपारला के फलित (८९); अनासकित (अपरियह) (९०); जैन पर्म में अनामस्ति (९०), बौद्धमें वे अनासस्ति (९२); गीवा में अनामकि (९३); अनासकित के प्रदन पर दुसनातमक दृष्टि से दिचार (९४);

अध्याय: ६ सामाजिक धर्म एवं दाधित्व

à

96-88

द्यालांकिक वर्ष (१८); वास वर्ष (१८), कार वर्ष (१८); राष्ट्र वर्ष (१६); वास्त्रक वर्ष (१६); कुछ वर्ष (१००); वास्त्रक (१००); वास्त्रक (१००); वास्त्रक (१००); वास्त्रक (१००); कुछ वर्ष (१००); वास्त्रक वर्षालांक वास्त्रक (१००); के सुर्विक क्षात्राविक वर्षालांक वर्षालां (१००); केवि और वर्ष का स्वाप्तक (१००); वर्ष की प्रधानना एवं मंद्र को प्रधान का वर्षालांक वर्षालां (१००); विद्युची वर्ष का वर्षालां (१००); वर्ष की प्रधानना एवं मंद्र को प्रधान का वर्ष की प्रधानना एवं मंद्र को प्रधान का वर्ष (१००); वर्ष के कार्यालां का वर्ष वर्ष का वर्षालां वर्ष (१००); वर्ष का वर्ष का वर्षालां वर्ष का वर्ष (१००); वर्ष का वर्य का वर्ष का वर्य का वर्ष का वर्ष का व्या का व्या का व्या का वर्ष का वर्ष का वर् अंत पर्स में सामाविक जीवन के निष्ठा मुत्र (१०६); जैन पर्स में मापाविक जीवन के कथवहार मृत्र (१०८); बोळ-पान्यरा में सामाविक वर्ष (१००); कोळ से मापाविक वर्ष (१००); कोळ के बाज-दिना के प्रति कर्जेट्य (११०); माजा-चिता का पुत्र क्ष स्वयुक्तार (११०); आवार्य (धिराक) के प्रति कर्जेट्य (११०); माजा-चिता का पुत्र क्ष स्वयुक्तार (११०); आवार्य (धिराक) के प्रति कर्जिट वर्षेट्य (११०); पित के प्रति प्रति कर्जिट परिका का स्वयुक्तार (११०); मित्र के प्रति प्रति के प्रति प्रति कर्जिट परिका का स्वयुक्तार (११०); मित्र के प्रति कर्जिट वर्षेट्य (११०); मित्र का स्वयुक्तार (१११); स्वयुक्तार प्रति स्वयुक्तार (१११); स्वयुक्तार प्रति स्वयुक्तार प्रति स्वयुक्तार प्रति स्वयुक्तार (१११); स्वयुक्तार स्व

भारतीय दर्जन में सामाजिक चेतना का विकास

सारतीय सार्थिक विशवन में वर्शन्य गायाविक नारभी को मनानं के लिए गार्थक्य हुने यह बात नेवा पाहिए, हि केवन हुन सार्थिक रायादी है नार्थ में सारतीय किया है सार्थिक रायादी है कि केव हुन सार्थिक रायादी है नार्थ है सार्थ केव रायादी है हुन है से एक स्वार्थ केव रायादी है हुन हों से कार्यायों है हुक्कर भी भारत में सारतीय के सार्थ कर रायादी है हुन हों है ना सार्थ कर रिवार के सार्थ कर केव सार्थ कर रायादी है केव सार्थ कर के सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ कर के सार्थ कर केव सार्थ केव सार्थ कर केव सार्थ केव सार्थ केव सार्थ केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्थ केव सार्थ कर केव सार्थ केव सार्थ कर केव सार्य कर केव सार्थ कर केव सार्य कर केव सार्थ कर केव सार्थ कर केव सार्य कर केव सार्थ कर केव सार्य कर केव सा

सपि हमारा हुमीध हो यह एहाँ कि मध्य-यून में दर्धन सापनो ओर न्यूरि मुनियों के हाथों में निरुक्तर तमा-नियन मुदिनीनियों के हाथों में बला गया । ५७७६ उनमें शाहिक यस प्रभान तथा अनुमृत्यिकक नामना एवं भावार-पास योज हो गया और

हमारी बीवन-दीमी से उनका रिस्ता भीरे-शीरे हटता गया ।

गामाजिक चेतना के विशय की दृष्टि से आरशीय चिन्तन के प्राचीन युग की हम तीन मार्गों में बोट नवने हैं :----

१ वंदिक यग.

२ श्रीपनियदिकसम् एवं

३ जैन-बीद सुग

वैदिक पुग में जनमानम में शामाजिक चेनता को जावत करने का प्रयत्न क्या गया, व्यक्ति औरतिगरिक युग में सामाजिक चेतना के निग् सामीजिक सामार का प्रस्तुतिकरण किया गया और जैन-बौद्ध युग में सामाजिक सम्बन्धों के शुद्धिकरण पर यत्न दिया गया । यैयिद्दरता और मास्यविज्ञा रोजों ही मानवीर 'हव' के अनिराम' अंग है।
पारवाम दिवारक के देर जा वचन है कि 'मनुन को है. यदि बहु माम्यिक मही,
दिन्तु यदि बहु साथ गाम्यिक हो है, भी वहु पानु के अधिक नहीं है। मनुन को
मनुत्या वैविज्ञान और नाम्यिक्त हो है, भी वहु पानु के अधिक नहीं है। मनुन को
मनुत्या वैविज्ञान और नाम्यिक्त हो है, को वहु पानु के अधिक नहीं है। मनुन मनुत्या एक ही साथ ताम्यिक कोग अधिकाक दोना है है। क्योंकि माना व्यक्तिएव से मान्य करता है, तो देव वा तम्य जममें वैविज्ञान साथ नाम्य उपनी साम्यिक्तम का दिगान करता है, तो देव वा तम्य जममें वैविज्ञान साथ मनुत्र होता है। कि पानु कर मन का सीमानीन विद्यादित होता है अपद वेप का अधिक प्रमुख्य होता है, तम्बद्ध का सीमानीन विद्यादित होता है और देव का अधिक प्रमुख्य होता है, तम्बद्ध का सीमानीन विद्यादित होता है और देव का अधिक प्रमुख्य होता है, तम्बद्ध का सीमानीन कहा जाता है। दिन्तु जब वह चौतरान और वीज्येण होता है, तम्बद्ध का सीमानीन कहा जाता है। दिन्तु अपने अधिक पराने मान्य होता है, तम्बद्ध का तम्बद्ध वीचन होता है। रिन्तु अपने और पराने मान्य मान्य अधिक नाम का सीमानीन नी है। अह पीनी साथान अभिनायों कर से स्थापानीक तो नहीं हो। तस्ती हो । साथ ही सनुत्य जब तक मनुत्य है, तह बीजरान मही हुआ है, तो दस्तावाद हो। एक सामानिक विद्यों एस उतिवादी के सामानीक कीनता

भारतीय चिन्तन की प्रवर्गक वंदिक बाग में सावादिक्ता का तरन उगके प्रारंभिक काल में ही उपस्थित है। वंदी में सामाजिक जीवन की शक्तवान के व्यावक गण्या है। वंदिक व्यावि पत्तल एव सहयोगपुर्व सामाजिक जीवन के लिए अध्ययंना करते हुए वहता है कि 'साम्यव्यत सदस्य को मागाजि जातवाम्'—सुम सिकडर क्यों, मिलकर वोगो, जुलादे मन नाम-साथ विचार करें, मधीन तुम्हारे जोवक व्यवहार में गहयोग, तुम्हारें बागों में समस्यत्या और तुम्हारें विचारों में समानता हो। ' आये पुना वह कहता है-

पुग्रारायमाराम् समानताहा। । । समानो मन्त्रः समिति समानी,

गमार्ग भनः सहचित्तसेपाप्। समानी व आकृति समाना द्वदयानि व । समानमस्तु वो मनो यथा व सुमहासति ॥

सपान् आप रावके निर्मय समान हो, आप सबको साम भी सबके किए समान हो, अपान् पत्नके प्रति समान अपनार करे। आपका मन भी समान हो और लागकी विग्रे भी नामत हो, आपके साक्य एक हो, आपके हृदय एक हो, आपका मन भी एक-हो सामि साम सिक्तुक कर अध्यो तह में काम कर साहें। वास्मवार सामानिक

्र व समाज-निस्त्र के परिजेश्च में बैडिक शुन के आरतीय चिन्तक की ये सबसे महर्च-पूर्ण दर्गार है। बैडिक क्षियों वा 'कुनको विश्वमार्थिंग' के कथ में एक सुनस्य एवं सुर्गास्त्र अर्थान्त्र मात्र की स्थान का मिसान सभी सफल हो सहना या अबसि में अन्यनन में

१. ऋग्वेद १०११९१।२

सुमार निष्टा ने बीज ना नरर करने । सहतीयपूर्व बीननशीती उरका मून मंत्रम या । प्रचेत अवगर पर साहित्याठ के माध्यम के ने बनत्यन में सामाजिक भेतना के विनास का प्रयाग नरने से । वे अपने साहित्याठ में नरूने में —

> ड शह नाववनु सह भी मूनक्तु सह बीर्यं करवावहै, तंत्रस्विनावधीतमस्तु सा विद्विपावहै।

हम नव साथ-गाय रक्षित हों, नाथ-जाय पोनित हों, साथ-नाथ सामध्यें को प्राप्त श्री. प्रमाण अच्यापन तेजन्ती हो, हम आशत में विदेश न करें। देशिक समाज दर्शन का बादर्श वा-'पन-इस्त समाहर, महसहस्त सीकर' सैवडों हाथों से इपटत वरो और हजार हाथों ने बोटो । किन्तु यह बोटने की बात दया या हुए। नहीं है अधिन सामाजिक दाजिल का क्षेप है। बरोहि भारतीय विश्वन में दान में तिए श्रंदिमांग राजा का प्रयोग शीता क्या है, इसमें लग दिल्ला या नामाजिक दावित्व वा बीच ही प्रमुख है, इपा, दया, बरमा ये तह शोग है। आचार्य राज्य ने दान की क्याक्या की है 'दान सविभाग' । वैन दर्शन में को अतिबि-मविभाग के अप में एक रक्तरण वत की व्यवस्था की गई है। सविशास राज्य करणा वा प्रशीक न होकर सामाजिक अधिकार का प्रतीक है। वैश्वित ऋषियों का निष्कर्ष था कि जो अनेता लाता है वह पापी है (देवनादी मवति केइलादी) दैन दार्शनक भी बहने के 'अधिकाशी ल ह दरन मोक्नो' जो सम-विभागी महा है इसकी मन्ति नहीं होगी। इस प्रकार हम बैदिक यय में शहयोद एवं सहजीवन का शंकाय उपस्थित पाने हैं । किन्तु उसके लिए दार्शनिक आधार का अस्ततिकरण क्षीय-निवृद्धिक विन्तुम में ही हुआ है । औषनियदिक ऋषि 'एकस्तुवा सर्वभगान्तरास्ता' 'सर्ब सन्दिरं बद्ध ' तथा 'ईप्रावास्यिवरं सर्वव' के कप में एक्टब की अनमति इस्ते लाग । ब्रोपनियदिविक्तिन में वैयन्तिकता से अपर चटकर सामाविक एकता के लिए अमेर-जिल्हा का सर्वोताच्य तास्विक आचार प्रस्तृत किया गया । इस प्रकार कर्म हेरों की समात्र-निष्टा बहिमुकी थी, बही उपनिषदों में बाकर अन्तर्मक्षी हो गयी । भारतीय दर्शन में यह अभेर-निष्टा ही सामाजिक एक्त्व की चेतना एवं शामाजिक समदा WI क्षाचार वर्ता है । ईंदावास्योपनियद का ऋषि कहता वा ---

यस्यु सर्वाणि भूतान्यान्धन्येतानुपत्यति । सर्वभनेप चारवानं स्तो न विजयनाते ॥

त्रों सभी प्राणियों को अपने में बीर अपने को सभी प्राणियों में देखता है वह अपनी इस एकारमत्रा की अनुभूति के कारण किसी से पूणा मही करता है। सामाजिए जीवन के विकास का आपार एकारमता की अनुभूति है और अब एकाम्मता की इंटिंट का विवास हो

१. तैसिरीय आस्थक ८।२

जारा है तो पूर्ण की रहिंदून के नाम बहुत समार को नारे हैं। इसे बहार करेंगूड़ स्मेर क्षेत्रीतार्पटर क्यूनियों ने कहाणांचा को पतार का जा दवा हुए सामार्थित अदा है दिलाया पूर्ण एक दिये के हैं तरे में को समार करत का प्रधान देखा, करा दूसी मीते क्यूनेर तार्पाल के परिवाद के प्रदेश का का हरका कर है तरहे समार्थ वर्षी हुए में समार्थ का दिखार भी बहुत दिवार होंगार को में स्वत्य की समार्थ की क्यून हुए हुए से

र्पात्तक्ष्मित्रं नर्वे व्यक्तिकात् जनायो जनपृथे तेन स्वकोत सुकतीया सा तृषा करान्तिवाग्।

सपीन इस बन में बो कुछ भी है बहु सभी है रहा थी। है रही नह हुए भी सी है, सि दैविलार नहा जा मी र इस बनार करेता में दुर्गाई में दैगिता है हो रही नह में हिंदी नहर मामिद को प्रमाशना दी गई है। कोड़ में निकार में बनार की स्वारंग हुए समझ के महिलार को स्वार्थीत करने हुए नहा पात हि पहुर्ग की भी भी भागित्य सहस के महिलार को स्वार्थित करने हुए नहा पात हि पहुर्ग की भी भी भागित्य है समी दुर्गों (सर्वात् ववात्र के दुर्ग तरुगों) जा भी साब है। अना अने भाग को छोत्यर है। उनमंबदार स्वार्थीत करें, संबद्ध या सम्बन्ध करने करी हित सम्बन्ध दिसा है। दुर्गा क्यन नहीं है। वरमंबदार सामित के बेतन के दिशान के लिए हमने स्वित्त सम्बन्ध हुएए क्या हिन आस्त्रीय संबन्ध का गई समस्य हा हि सीपी भी ने हम कोड़ हमा दें से सह पात हिंगा है। उसकी स्वस्त्र का माने सुक्त कर हो साथे दिल्लु सुन कोड़ हमा दें दो यह मेंच्या है। उसकी स्वस्त्र का माने सुक्त कर है। येत स्वस्त्र मूर्गों साथ साथ साथ सिंगा है।

धीता में सामाजिक चेतना

यदि हम वर्षानगरों है। महामास्त बौर दगहे हो। यह बरा गीना दो बौर सारे हैं हो वहीं भी हमें हमामास्त्र बेरान का रूपट रहीन होता है। सहाराष्ट्र हो। रहाना स्थाप्ट हम वह दिए जाने वर्षास्त्र हमान्यत्त्री वर एक रूपट सहारिकर गिला जा सम्बद्ध है। मदेवाम महामारक में इस समाज की सांगिर शक्तनता का यह निवास्त्र परिमारिट होता हैं। तिम वर पाप्तमाय विच्तन में सांगिर शक्त दिया पद्मा है। भीता भी दर्ग पहांग्यता भी मतुमूर्ति पर बन देवों है। गीताकार सुकृष्ण है कि

'बारगीपम्येन सर्वत समं परपति योऽर्मृत । सुर्खना मीर बाहुसंस योगी परमोमन ॥'र

मुल दु स की अनुभूति में सभी को अपने समान समझता है वही मक्स . इतना ही नहीं, वह सो इनसे आमें यह भी कन्ना है कि सक्ता दर्शन दी है थो हमें एकारमता की अनुभवि कराता है—"अविस्थत विभवेत सम्हत् विद्धि सानिवास ।' वैद्धीवाद विधिनाताओं से भी श्वासका की सनुभूति हो सात की सर्तिवाद मोरे हुमारी मदावर्दण्या का कर माव स्रायद है । बासाबिब दृष्टि हो दोता 'वर्षकृत हिरे क्या.' वा नामाबिक स्नार्ध भी स्वपुत्र करती हैं । सामावद स्वय कृतक होता लोकनात्राज के लिए गर्थ करते कहता हो जीवा के समावदानि वा मूल सन्तर्भ हैं। धीदाण स्वयंद कर में वहते हैं—

'ते धानुबन्धि माबेद गर्दब्वहिरेत्याः'व

सार इरना ही नहीं, योगा में नामानिक सामित्रों के निर्माहन पर भी पूरानूना बन दिया बात है जो बारने नामाजिक सामित्रों को पूर्व दियों हिना भोग नरहा है बहु मीतानार नी दुर्गिय के बोर (शेन पुन मा शहें)। बात होने मांत्र भाग निया पता है बहु यार वा हो अर्थन करहा है। श्रुवों दे दवर याता से वनस्तास्त्रास्त्रास्त्रा १११)। भोता हमें नामान में यहर ही चीरन मोत्रे की सिता देती हैं इमालिए यानी सम्मार से नोस्त्री परिकाश में मान्यन चों है। यह नहीं हैं हि—

'बाम्यानां कमेंनां स्वामं संस्थान क्यपे विदु ^{(६}

काम्य अर्थान् रवायं बुक्त वर्षों का त्यात हो संश्वास है, वेचन निर्दान और निक्रिय हो जाता सन्मान नहीं है। सक्त मंत्र्यामी का कतन है संबाद में रहकर लोकरण्याण के निम्न कतावत्त्र आब से वर्ष करवा रहे।

> अनाधित कर्मकर्म कार्य करोदि यः। स सम्बाह्य कोती कह निर्दात संवर्धकरा, ॥३

गीश में मीपूरण पाने हैं कि लोक-विचा थे। चाहरे हुए कर्म करना रहे (दूर्वान् विद्यान तथा असमा विद्यान् में में मानवहन्। में बीश में मुणाबित कर्म के आपार पर वर्ग-असमा बा में आपार प्रस्तुत किया या हुए भी मानवित्त हुन्दि से कर्मची पूर्व सारित्यों के विचान क्या कर महत्त्वपूर्व कर्म था, वयकि भारतान समाज का यह दुर्माण था कि पुण वर्षान् देविकार योग्यत के बाबार पर कर्म पूर्व कर्म का यह विभागत विद्यान मिल्लि निवार पुरत्य के विधान अर्थों से पान पर्वत्य देवी में पर्व एवं पात में भी की विदार पुरत्य के विधान अर्थों से प्रस्तुत के क्या प्रमाण से अवनारणा है वह अन्य पुण नहीं विद्यान प्रस्तुत के विधान अर्थों से अवनारणा है और जिल्ली सीमा तक मधाय के आधिकता विद्यात का हो प्रस्तुतीकरण है।

शामाधिक जीवन में विषयता एवं सवर्ष का एक अहरवानं कारण गामित का अधिकार है। शीमदमानवत भी ईवानान्योत्तिकृद के शामत ही सम्पत्ति पर क्यांत्र के अधिकार को अस्थोकार कन्यों है। उसमें कहा गया है.~

चैन, बोद्ध और गोता का समात्र दर्शन

यावन् भ्रियेत जठर, तावन् स्पन्य देहिनाम् । अधिको सोऽभिमन्येत्, स स्तेनो दण्डमर्हनि ॥

अर्थान् अपनो दिहिक आवद्यस्ता से अपिक मण्यत पर अपना स्थल्य मानना मामा-जब दृष्टि से पोगे हैं, अर्थाप्यत पेट्स है। आज वा नामाजनाद पूर्व साम्यवाद से दियों सादमं पर लड़ा है, योग्याना के अनुमार कार्य और आवद्यस्ता के अनुमार देवने की सानी पारचा यहाँ दूरी तरह उपनिष्ठ हैं। भारतीय चिन्तन में पुत्र और सात ग, जो वर्षांकरण है, उसमें भी मामाजिक दृष्टि ही त्रमुल हैं। बार के रूप में जिन दुष्टी हा और दूप के रूप में जिन सद्युगों का उर्हण्य हैं उत्तर मानदण वैयों लाइ और न मी अर्थाता सामाजिक जोवन से अधिक है। पुष्य और पाद की एक मात करोड़ि — किसों कर्म का कील-पंत्र में उपयोगी या अनुस्थितों होना। वहा भी यथा हैं—

'वरोपकाराथ पृथ्याव, पाताय परपीहनम्'

को लोक के लिए हितकर है नहमाणकर है, बहर पुष्प है और हमके बिरागित को भी दूसरों के लिए पीड़ा-नतक है, अवध्यतकर है बह पान है। इस प्रकार भारतीय विगटन में पुरव-राम की क्याक्कारों की मामाजिक दृष्टि वर हो आधारित हैं।

जैन एवं बौद्धपर्म में सामाजिक चेतना

यदि हुम् निवर्शक पारा के समर्थाक जैन्यामं सूर्व बोद्धपर्य की और दुन्दियात करते हैं सै प्रमान स्वार के स्वर है । समर्थ दूरिय में दूर्य सामान का है कि हुम्में मामान की दूरिय हो क्लेसा की सह है। सामानवान प्रमान मामान हिंदि कि सूर्वाम जाता है हि सिवृृृृि मामान कर सामान कर देश मामान कर देश मामान कर देश मामान कर देश मामान कर है। स्वर हो में हैं। सिवृृृृ्ष्य मामान कर सामान के सामान के सामान कर है। सिवृृृृ्ष्य मामान के सामान के स

धीमञ्जानकत्र आहेपाट

मध्यस्य अनिवार्यन्ता हमारे नामधिक भावत में ही है। प्रान्त्यावरणपुत्र नामक भैन जायम में बहा गया है कि 'सीर्वकर बा यह मूर्वक्ति प्रवसन सभी प्रासियों ने अनल गुरं बरणा के लिए हैं। पांकी मराप्रत सर्वप्रधार से लोकड़ित के लिए ही हैं। हिसा, शुद्ध, मोशी धार्तिकार, सदहु (परिषष्ठ) ये सब बैजीत्त्रक नहीं साधातिक क्रीवन की इन्पर्नियाँ है। ये सब दूसरों के प्रति हमारे बारहार के सवदित है। हिला का अर्थ है विभी क्षाय की हिमा, क्षमन्य का मनत्त्व है विन्हों अन्य को कुल्य बानवारी रेगा कीरी बां बर्च है दिनी पुररे की निर्मान का बारहरण करना कार्यकार का समाब है सामाजिक मान्यताओं के किया मीन नामक्य क्यारित करका, इसी प्रकार नामक या यरियान का अर्थ है सामात्र के कार्यक विषयण पैता वतना । बता समात्र कीवन के क्षप्राव में इवका कोई क्षयें या गरम रह गांचा है है अहिका सन्तर, अरन्तर, बद्धावर्ष गुढ सर्पात्तक की को मर्मारायें इस बर्मानों में दी वे कुमारे मानाविक नामाना की माँछ के fre fill i

हुनी प्रवाद जैन, बीद्ध और बीद दर्गेनी की नायना पद्धति में नवान क्या से प्रवन्त मेंची, प्रचीप कारत और सम्बाध मादनाओं के आधार पर भी लामादिक शुदर्ज हो क्तार क्षित्र का सक्षण है । सैमाक्षणे अविष्यान प्रतासाधी की अधिक्षानित सिम्म कारों में बचने हैं ---

> शानेत् देवी गुणीयु प्रयोध सिमार्गेषु भी तेत् कृत्यारायस् । कादाब्दाव किंग्निवहणी कहा प्रकार दिएकानु देव र.

है क्षत्र हमारे सभी में प्रारियों के प्रति निकार, गुणीनमों ने प्रति बचीप जुलियों से प्रति बरबा तथा हुन्द कारे वे बाँत रामान्य बाब कहा दिल्लान बहे । इत प्रवान इत बाहmiglig unen II mein it fefent unte fe aufach II geit eines fen uner के भी रागे स्वाप्त दिवा बारा है। स्वाप्त स एकर स्वेपी के कार्य हम दिन्ह प्रवार औरक fall ug geift mimfannt & fen alfe einem f. ubr gu guiel a. ge meir E nefeg all merneibten & ultre er gir mare fatt auf fin que celer an gre दिनक अरों है । इस्ते केंग्र कोट बनना हो। गहर बाता कर रही है । होन्दर को कुन्हर at Ridically win ay daming fon Good noone in aufere dieber " दर्ग रियु मी अन्याद वांचायक रियमो है आदिशीनहरूदम्बद रिवसन । हर्ने रूप क दरदर मर्देद' है बच्चे कापका संगुलनक संदी हुआहेबा काल बदद प्राप्त और पार्ट बहु बराम (महोद्रा) वर्त समार्थ है । वित्य पढ़ी के दुरुष बुक्य , श्रुवार, क्षाप्त عوا معاهد يام مسجد فا عاما وساعت ما يسم هو له أو الأوس en it all nicht beat familier er Befon eine fan briefen bereit in bereit F SCHARTS PH ELECTION

केंत्र. क्षी<u>ट और मीत का समात्र वर्श</u>न

e. किया गया है। पारिवारिक और सामाजिक जीवन में हमारे पारस्परिक सम्बन्धों ने

सुमधुर एन समायोजनपूर्ण बनाने तथा नामाजिक टकराव के कारणी का विश्लेषण कर उन्हें दूर करने के लिए इन दर्शनों का महत्वपूर्ण ग्रीगदान है।

वस्तुत इत दर्शनों में आवार भृद्धि पर बल देकर व्यस्ति सुधार के माध्यम है समाज-मुगार का मार्ग प्रशस्त्र किया । इन्होंने व्यक्ति की समाज का केन्द्र माना और इमलिए उतके परित्र के निर्माण पर बल दिया। बस्तून इन दर्शनों के सुप तक समाव-रवना का कार्य पूरा हो चुडा था जत इन्होंने मुखा रूप ने सामाजिक बुराइपों की समाप्त करने का प्रयाम किया और नामाजिक नम्बन्धों की गुद्धि पर बल दिया।

रागात्मकता और समाज

सम्भवत इत दर्शनो को जिन जायारों पर सामाजिक जीवन से कटा हुआ माना जाता है उनमें प्रमृत्व हैं—राग या आमन्तित का प्रदान, सन्धास या निवृतिमार्ग की प्रधानता तथा मोटा का प्रश्वत । ये हो ऐसे तत्व हैं थो अपन्ति को सामाजिक जीवन से अलग करने हैं। अत भारतीय सदमें में इन प्रत्यों की सामाजिक दुष्टि से समीधा भावस्यक्त है।

गर्वप्रयम भारतीय यर्शन आनंदित, राग या नवश की समाप्ति वर वन देता है। किन्द्र प्रश्न यह है कि क्या आमधित या राग से करर उठने की बात मामाजिक नोवन मैं अलग करती है। गामाजिक जीवन का आगार पारक्परिक सम्बन्ध है और सामान्मः त्रया यह माना जाता है कि राग से मुक्ति या आमंत्रित की समाप्ति तभी सम्भव है जबिर स्विन अपने को नामाजिक जीवन से या पारिवारिक जीवन से अलग कर है ! रिन्तु यह एक भारत वारणा ही है। न तो सम्बन्द शोह देने मात्र से राग समान्त हैं। माना है, न राग के अभाव मात्र ने सवय टूट जाते हैं, बास्तविकता को यह है, कि राग मा आमन्ति नी उपन्यिति में हमारे ययार्थ सामाजिक सबय ही नहीं बत पाने । सामान निर भीरत और सामाधिक गवधों की वियमता के मूल में क्यस्ति की राग-भावना ही बाम बरनी है। नामान्यनमा राम द्वेप का सहमामी होता है और जब सम्बन्ध राग-वेग के भागर पर सड़े होने हैं ती इन मबंधों से टकराहट एवं विषमता स्वामाविक तप से प्रसान होती है। बोधिनप्रिकार में आबार्य मान्तिदेव लिखने हैं -

> उपहरा ये व अवन्ति होते यार्वान्त स् लानि भवानि धैर । सर्वाण नाम्यान्यपरिवहेण तपु कि समानेन परिवहेण ॥ भारमानगारिस्यस्य दृशी स्यक्तुन शहराहे। ममानिज्यस्थितकः दात् स्वान् न पश्यते ।।

गनार में सभी द न और मय एन सम्बन्ध उपदय संयत्व के मररण होते हैं। जड ममन्य बृद्धि का परिन्यान नहीं किया आता तथ तक इन दु को की समानि सम्भव नहीं है । जैमे अग्नि का परित्याय किये विभा तण्यन्य दाह से बचना समस्मत है । राग हमें सामाजिक जीवन से जोड़ता नहीं हैं, अपित तोड़ता ही हैं। राय के कारण भेरा या ममत्त्र भाव चरपन्न होता है। मेरे सबबी, मेरी जाति, मेरा धर्म, मेरा राष्ट्र ये विचार विकासत होते हैं और उसके परिणामस्वरूप माई-मतीजाबाद, जातिवाद माम्प्रदाविकता भीर सक्तित राष्ट्रवाद का जन्म होता है। आज मानव जाति के सुमपुर सामाजिक सम्बन्धों में ये ही सबसे अधिक बायक तत्त्व हैं। ये ग्रमुख्य को पारिवारिक, जातीय. साम्प्रदायिक और राष्ट्रीय शह स्वाची से ऊपर नहीं उठने देते हैं ॥ वे ही आज की विपमता के मल कारण है। भारतीय दर्शन ने राम या आमृतित के प्रक्राण पर बल देकर सामाजिकता की एक यथार्थ दरिट ही प्रदान की है। प्रथम तो यह कि राग किसी पर होता है और जो किसी पर होना है वह सब पर नहीं हो श्वता है। बत राग में अपर उदै बिना या आसंदित को छोडे विवा सामाजिक्ता की श्रूची अभिका प्राप्त नहीं की जा सकती । सामाजिक कीवन की वियमताओं का मुख 'स्व' की सकवित सीमा ही है । व्यक्ति जिमे अपना मानता है उसके हित को कामना करता है और जिसे पराया मानता है उसके हित की उपेक्षा करता है। सामाजिक जीवन में ग्रोपण, कर व्यवहार, प्या आदि सभी उन्ही के प्रति किये जाने हैं, जिन्हें हम अपना नहीं मानने हैं। यद्यपि मह बड़ा कठिन कार्य है कि इस अपनी रागात्मकता या ममस्ववृत्ति का पूर्णतया विसर्जन कर सक्तें किन्तू यह भी उतना ही सत्य है कि उत्तरा एक सीमा तक विसर्जन निये विना अपेडित सामाजिक जीवन का विकास नहीं हो सकता। व्यक्ति का मनस्व चाहे वह व्यक्तिगत जीवन, पारिवारिक जीवन या राष्ट्र की सीमा तक विस्तृत हो, हमें म्बार्ध-भावना से ऊपर मही उठने देता । स्वहित की वृत्ति बाहे वह परिवार के प्रति हो या राज्य के प्रति, समान क्य से सामाजिक्ता की जिरोबी ही सिद्ध होती है। उसके होते हुए सक्या सामाजिक जीवन फलित नहीं हो गकता । जिस प्रकार परिवार के प्रति ममत्व ना सथन रूप हममें राष्ट्रीय चेतना ना विकास नहीं कर सकता उसी प्रकार राष्ट्रीयता के प्रति भी भमत्व सच्ची मानवीय एकता में सहायक सिद्ध नहीं ही सनता । इस प्रकार हम देखने हैं कि व्यक्ति जब तक राग या आमन्ति से ऊपर नहीं उठता तब तक सामाजिरता का सद्याव सम्बद नहीं ही सकता । समाज स्थाप एवं समर्थण के आधार पर लड़ा होता है अब बीतराग या जनासकत दृष्टि हो सामाजिक जीवन के लिए बास्तविक आधार प्रस्तुत कर सकती है और सम्पूर्ण मानव-जाति में मुध्युर सामाजिक सम्बन्धो 🔳 निर्माण कर केवती हैं। यदि हम सामाजिक सम्बन्धों में उत्पन्न होने बाली विषमता एवं दबराहट के कारणों का विश्लेषण करें तो उसके मुख में हमारी आसंक्ति या रागाम्म स्ता ही प्रमुख ई । आमतित, समत्व आव या राग के कारण हो मनुष्य में

शोधिचर्यावतार ८११३४-१३५

20

संग्रह, आर्पम भीर काटाबार के तत्त्व अन्य ले हैं है। अब यह कहता प्रणित ही होगी कि इस दर्शनों ने राय या जानरित्र के प्रशास पर बात देवर गानरित शिमगाओं की समाप्त करने एवं सामाजिक समन्त्र की स्वापका करते में सहस्वकूर्ण सरगीय दिया है। समाज स्माण एवं समर्थण पर लड़ा होता है. जीता है और दिवरित होता है. यह भारतीय चिन्तन का महत्वपूर्ण निष्कर्ष है । यस्तुच जानकित वा नान तत्त्व की प्रपत्निति में गणनी गार्वभीय गामाजिलका एकिन नहीं होती हैं।

सामाजिकता का बाधार राग वा विवेक ?

सम्भवत यहाँ यह बस्त उपस्थित हिया जा सहता है कि राय के प्रभार में सामी-विक सम्बन्धी की ओडने बाला तरव का होगा ? कान के अधाव ने तो शारे गामाजिक सम्बन्द बरमरा कर टूट वायेंने । रागान्यवता ही तो हमें एव-दूगरे ने जोइनी हैं। मत राग सामाजिक-भोजन का एक भावश्यक तत्व है। हिल्लू लेगी अपनी वित्रम धारणा में जो सरव व्यक्ति को व्यक्ति से या समाज से ओहता है, बह राग नहीं, विजेत है। तत्वार्षभूत में इस बात की चर्चा उपन्यित की गई है कि विभिन्न ब्रश्य एर-पूर्णरे का सहयोग किम प्रकार करने हैं। उसमें जहाँ पुरुषल-उथ्य को जीव-३३४ की छपकारक बहा गया है, वहीं एंड जीव की दूसरे तीशों का उपकारक कहा गया है 'परस्परोपप्रहो जोबानाम' । बेवन-गत्ता वर्दि हिनी हा उपहार वा हिन हर गहनी हैं। तो वेदन-गत्ता का ही कर गक्ती है। इस बकार पारस्तरिक दिन-माधन यह त्रीय की स्वभाव है और यह पारस्परिक हिल-नायन की स्वामाधिक बृति ही मनुष्य की गामां विकता का आगार है । इस स्वाभाविक-विल के विकास के दी आपार है-एर रागात्मक और दूसरा विवेद । रागात्मकता हमें बही से ओडती है, सी करी से तीवती भी है। इस प्रकार रामान्मवना के आधार पर जब हम किसी को अपना मानने हैं, ही समके विरोधी के प्रति "गर" का भाग भी वा जाता है। राग द्वेप के साथ ही नीठा है। वे ऐंगे ज़हवा शिश हैं, जो एक शाय उत्पन्न होने हैं, एक गाय और हैं और एक साथ मरने भी है। राग ओटता है, तो ड्रेंप तोडता है। राग के बापार पर जो भी समात्र लडा होगा, तो उनमें अनिवार्य रूप ने वर्षमेद और वर्षमेद रहेगा ही। सम्बी सामात्रिक-चेतना का आधार राग नहीं, शिवेक होगा । विशेक के आधार पर दापितव-शोष एवं वर्तव्य-बीन की जेतना जान्द होता । राम की भाषा अधिकार की भाषा है, जबकि विवेद की माथा क्रवेट्य की माया है । जहां केवल अधिकारों की बात होती हैं, यहाँ वैवल विष्टुत सामानिकता होतो हैं । स्वस्थ सामाजिहता अधिकार वा गही, बर्तव्य का बोप कराती है और ऐसी सामाजिकता का आधार 'विवेक' होता है, वर्तव्य-शोध होता है। बैन-धर्म ऐसी ही मामाजिक-चेतना को विमित्र करना चाहता है। अब

t. Atará 4128

विवेत हमारी मामाविक-नेतना का आधार बनता है, तो मेरे और तेरे वी, अपने और परामें भी चेतना समाप्त हो वाली है। नामी बारसवन होने है। जैन-वर्ष ने बहिन्स को को अनने सर्थ का बासार माना है, उसका आपार गरी बारमवन कृष्टि है।

सामाजिक जीवन के बायक सस्य अहंकार और कथाय

तासाहिक सम्बन्ध में स्वतित का जरकार भी बहुत क्य प्रश्चनुमाँ वार्य वारतः है। सामल की रक्षा या वार्यिक्य की सावना रूपने अमून कुन्य हुन हुन वारण भी मामा-विक्रण्योक्त में विवक्ता स्वत्यन होती है। सामल कीर सामित्र अस्या आतिक्षेत्र में स्मीद साहिया पेटला-किलाको कृत्य में साह सामल है। वर्याच्या में को रक्ष्में में को स्वत्य में को रक्ष्में में को सामल है। वर्याच्या में को रक्ष्में में को सामल है। वर्याच्या में को रक्ष्में माने साह सामल है। वर्याच्या में को साम है। का साह का सिक्त है। का है। साह स्वतित है साम में साविक्य है। वृत्य सा सावत को सावत देवा होती है। जे वह दूर्य है के स्वतिस्था के का सामल करता है। अस्या को सावत करता है। हिता को स्वत्य के विशासन के हाम सामाजिक वनका है। सावत का साह है। हुन सो को योव-स्थान के विशासन के हाम सामाजिक वनका का मानव कामल है। हुन सो को योव-स्थान का सिंह्या-विक्यान भी माने सामित्रों के मानव स्थाना है। इस्पी को स्थान स्थान का सामल स्थान है। हुन सो को स्थान के सावत का सिंद्य-विक्य कर का सामल वर साहित्य-विक्य की स्थान का पूर्व सम्बन्ध कर है। हुन से को सावत की स्थान का स्थान कर है। स्थान वर कारीका का स्थान के स्थान का स्थान की सावत को रहा का स्थान है।

(लीभ) है आरंग (कीन), है वर्ष (बार जायान) और प्र आरंग (शिलाया)। शिहें वैश्वसा से बार बागा बाग आगा है। वे बागों आरंग-आरंग एक संग्राहित प्रोप्त से विश्वसा, तराने एवं कार्यान के बागन बाने हैं। है ह वह वी कार्यानिक प्रोप्त से सीन्य, कार्यानियाने, कार्यानुकी-वारान, कुन-कार्यान, दिश्वसायन कार्यानियानं कार्याने हिंदारित्र होते हैं। वे बारेस की कार्यानुकी के बागन साम्ये, युद्ध आवस्य एवं शर्म होते हैं। वे बारेस की कार्यानुकी के बारान साम्ये, युद्ध आवस्य एवं श्रीम हैं। कार्याने होते हैं। वे वार्य की मार्ग्युलि के बारान साम्ये, व्यवस्था होते हैं। कार्यान्त स्थानियानं के स्थानियानं की सीपूर्ण कार्यान्त होता होता है। वे बारान की साम्ये की स्थानियानं कार्यान्त होता है। वे बारान की सीपूर्ण कार्यान होता है। वे बारान कार्यान्त कर्यान्त होता है। वे बारान की सीपूर्ण कार्यान होता होता है। विश्वसायन कार्यान कार्यान की सीपूर्ण कार्यान होता है। कार्य कर्यान्त कार्यान होता है। विश्वसायन कार्यान कार्यान की सीपूर्ण कर्यान की सीपूर्ण कर्यान होता है। विश्वसायन कार्यान क्षान क्ष्यान कर्यान कर्यान कर्यान क्ष्यान क्ष्यान क्ष्यान कर्यान कर्यान क्ष्यान क्

ęο सर्व संवरमृति सामाजिक जीवन की अधुशहरों हैं। इन्हें बल्डे के जिए सीव संगर्दी के रूप मंजित मैरिया सपूर्णाकी स्थापना की गई, वे पूर्णण सामाजिक जीता में सम्बन्धित है। अनः मारक्षीय दर्भात ने जनायतित एवं मीक्शनदा के प्रशास गर मी हुँ?

संग्यास और समाज

बाउँ दिया है बहु सामाजिसका का विशेषी मही है।

गामान्यतया भारतीय दर्यत के शराय में प्रत्या को समात्र विरोध माता जाती है। तिन्तु क्या संस्थास की धारणा समाज निरोक्ष है ? शिरक्ष ही संस्थारी पारिवारिक जीवत का त्याग करता है शिन्तु दगने क्या वह अगायाविक क्षी जाना है है संस्थान के स^{्रान्त में} बह बहुता है कि 'दिलेपमा पुरेवणा लोरेपमा मना गरिस्टक्स' अर्थांपु में अर्थ-गामी, संग्तान-पामना और यदा-पामना का परिशास करता है निश्तु क्या धन-गणवी, नानीत समा यग-वीति की कामना का परित्यान नमात्र का परित्यान है ? अन्युत: समहत एतः णाश्री ना स्थान स्वार्थ का त्यान है, वागनामद श्रीवन का त्यान है, शंत्यान का यह संबत्य उमे समान-विमुख नही बनाना है, अहिनु गयात्र बक्यान की उच्चनर भूविका पर अधिब्दित करता है बबाकि सच्चा लोकहित नि स्वार्थना एवं विराण की भूमि पर स्थित होतर ही किया जा सकता है।

भारतीय जिन्तन सन्याम को समाज-निरपेक्ष बहुँ। मानना । भगवान बुद्ध का मह आदेश 'चरस्य भिक्त्यवे चारिक बहुबन-हिताय बहुबन-मुन्ताय क्रोकानुक्रमाय अस्माय हिनार देव मनुस्मान' (विशयपिटक-महाबन्ग) हम दात वा प्रमाण है कि सन्याग लोह-मान के लिए होता है। सच्चा सन्यामी वह व्यक्ति है जो नमात्र से अल्पनम नेकर उमे अपि-कतम देता है । बस्तुत वह कुटुन्य, परिवार आदि का स्थाय इमलित करता है कि मर्मीट का होतर रहे क्योंकि जो किगी काई वह सबका नहीं हो नकता, जो सबका है ^{बहु} विसी ना नहीं है। सन्यामी नि स्वार्य और निश्वाम रूप से लोक-मगल का साधक होता है। मन्यास शब्द सम् पूर्वक न्यास है, न्यान शब्द का एक अर्थ देखरेल करना भी है। संस्थामी बह स्पन्ति है जो सम्यक् लय से एक स्थामी (इस्टी) की भूमिता अवा करता है और श्यामी वह है जो अमस्य भाव और स्वामिश्व का स्वाम करके किसी ट्रस्ट (सम्पदा) का रक्षण एव विकास करता हैं । सन्यामी सकते अर्थ में एक दृश्टी है । दृश्टी यदि दृश्ट की जपयोग अपने हिन में करता है, अपने नो उसका स्वामी समझता है तो वह सम्यक् ट्रस्टी नहीं हो सकता है। इसी प्रकार यदि वह दूस्ट के पक्षण एवं विकास का प्रयस्त न करें ो भी सब्दे अर्थ में ट्रस्टी नहीं है। इसी प्रकार यदि सन्यामी लोकेपणा से युवत थे। ं द्विमा स्वार्थ बुद्धि से काम करता है तो सन्यासी नहीं है और मदि हो क ा गरता है, लोकमगल के लिए प्रवास नहीं करता है सो यह भी सन्यासी नहीं है।

उनके जीवन का मियन तो 'सर्यभूत-हिने रत.' का है ।

तेलक इस आक्ष्य के लिए महेन्द्र मृति जी का आभारी है ।

गम्भास में राग से ऊपर उठना बावदयक हैं। किंतु इसका सालये समाज की उपेशा नहीं है। संन्यास की भूमिका में स्वत्व एवं सभस्य के िए निश्चय ही कोई स्थान नही है। किर भी वह पत्रायन नहीं, अपितृ समर्पण है। ममत्व का परिस्थान कर्तस्य मी खरेजा नहीं है, अपितु करोंन्य का सही बीच है। सन्धामी उस अधिका पर घटा होता है जहां ब्यक्ति अपने में समस्टिको और लगन्टि में अपने को देखता है। उसकी पेतना अपने और परापे के भेद से उलार उठ जाती हैं। यह अपने और पराये के विचार से ह्नपर हो जाना ममात्र विमुलपा नहीं है, अविनु यह तो उसके हृदय की व्यापनता है, महानता है। इसलिए भारतीय चिन्तको ने वहा है ---

अय निज परो वेति गणना रुप्षेतमाम । श्वारवरिताना तु बनुधैव भुटुम्बन्म ॥

सन्याम की मुमिका न तो आसबित की भूमिका है और न उपेला की । उसकी बास्तविक स्थिति माय' (नसं) के समान ममस्य रहित कर्तव्य माय की होती है। जैन-बर्म में कहा भी गया है --

> सम दक्टि जीवडा करे क्टम्ब प्रतिपाल। अन्तर सु न्यारा रहे कु धाप लिलावे बाल ।।

बस्तत निर्ममत्व एव नि स्वार्थ मात्र से तथा वैयनितकता बीर स्वार्थ से क्रपर उठकर कर्तव्य का पालन ही सन्यात की सच्ची मूमिका है। सन्यासी वह व्यक्ति है जो लोक-क्ष्याल के लिए अपने क्यानितस्य एवं अपने शरीर की सम्पित कर देता है। वह भी कुछ भी स्थान करता है वह समाज के लिए एक बादर्श ननदा है। समाज में नैतिक चेतना की जापत करना तथा सामाजिक जीवन में बाने वाली दू प्रवृत्तियों से स्पतित को क्या-**कर लोकमगल के लिए उसे दिया-निर्देश देना सन्यासी का सर्वोपरि कर्तस्य माना गया** है। अतः हम कह सकते हैं कि भारतीय दर्शन में संस्थास की जो मूर्शिका प्रस्तृत की गई है बह सामाजिकता की विरोधी नहीं है। सन्यासी खुट स्वार्थ से उत्पर उठकर खड़ा हुआ क्वनित होता है, को मादर्श समान-रचना के किए प्रयत्नशील रहता है। अब हम मोक्ष कं प्रत्यय भी मामाजिक चपादेयता पर चर्चा करना चाहेंते ।

पुरुषार्थं चतुष्टय एवं समाज

भारतीय दर्शन मातव जीवन के लिए वर्ष, काम, धर्म और मोझ इन बार पृष्पाची को स्वीकार करता है। यदि इस सामाजिक बोबन के सन्दर्भ में इन पर विचार करते हैं तो इनमें से अर्थ, काम और अर्म का मार्गाजिक बीवन में महत्वपूर्ण स्वान है । सामाजिक जीवन में ही इन क्षेत्रों पूरुपार्वों की उपलब्धि सम्बद हैं। अधीपार्जन और काम का सेवन हो सामाजिक जीवन में जुड़ा हुआ हो होता है। विन्तु भारतीय विन्तन में धर्म भी सामाजिक व्यवस्था और धान्ति वे निए ही है बयोकि वर्ध की 'वर्धो बारवते प्रजा.' के



्य दुरुवार भी नहीं कर सकते वर्षोंकि जीवन-मुक्त एक ऐसा व्यक्तित्व है जो सदेव होर-न-पान के निय मन्द्रत रहुता है। जैन स्वीन में तीर्षकर, बीड पर्गन में सदेव पूर्व बोधिनाद और बेटिक दर्शन में विषयत मित्रा निया है उससे हम निवय ही दम इनके भ्रतिकर्त को निया क्या में विषयत किया नया है उससे हम निवय ही दम हित्त कर पर पहुँच मदने हैं कि मोश के अस्पय की सामाजिक जगादेवता भी है। यह इसेक-पान कोर मनत करवाय का एक सहाज कार्यों माना का प्रकार है निर्देश कर्यों कर बाद हुनों में मुक्त होला ही मुक्ति है, भाव क्रमा हो नहीं, भादीय विषयत में वैयनिक मुक्ति की कोरों मी कोर्य-न्याण के लिय असलपोल वने पहने की स्वितम महत्व हिंदा गानी है। बोह्य स्वयं में कीर्य-निवास का और सीर्य किया मी कीर्य-न्याण के लिय असलपोल वने पहने की सित्स महत्व दिया गानी है। बौद प्रयोग में वोधिमक का और सीर्या के विवस्त महत्व है।

बन्धन और दृ स को कोई परवाह नहीं करता है। वह बहुता है— बहुतानेबदु कीर यदि दु ल विगच्छति । उत्पाद्यनेव तद् दु स्व सदयेन परास्त्रने । मुख्यतानेबु सम्बद् ये ते प्रमोधनानदा । होड वनु पर्याप्त योहोगार्यानेन किए।

मुख्यमानेतृ तारवेषु में तो प्रमोधनागता । हिरेब ननु पर्याच्य मोशंचारिक्षनेन किस् ॥ ध्याप्त प्रकेश नष्ट उठाने हे बहुतें का हुन्य हुर होता हो, शोकनवार्ष्ट्रक उनते हु तर प्रस्तात हो नथात है। माणियों को हुन्यों है मुख्य होता हमा देनतव को सानदा प्राप्त होता है सुने प्रसाद नहीं, कि गीरण मोश प्राप्त करने की एक्स भी ना सहस्वकता

हो। वे ने बंदिर में पूर्वित भी धारणा की आलोजना करते हुए और उत्त-जन की मुक्ति के लिए धरने सहन्य की स्पन्ट करते हुए भागवत के संश्वास स्वयम में प्रहुलाद ने स्पन्ट कप से बहुत पर कि----

बहाया कि-

प्राचेण देशमुनयः स्वतिमृश्वित्रसामाः । मीनं चरन्ति विजने न परार्थनिष्टाः ॥ नैदान् विहास इपणान् विमुमुसूरेसः ।

है बनु अपनी मुनिन की कामना वरने वाले देव और मुनि ही। अब तह कामी हो कुछे हैं, जो अंगन में आवर मीन सामन दिया करने थे। दिन्तु उनमें परावर्शनिका नहीं थी। मैं दो अनेना हन गढ़ इसीजनों को छोस्तर मुक्त होना भी नहीं चाहरा। " यह सामने दार्गन और काहिय का तमें के उत्तर है। इसी प्रवाद ओस्वरक भी सह हो दोन और दुनी कनी थीं हुन्न के मुक्त कामने के लिए प्रमन्त्रीय करे पूर्व में अभिकास करना है भीर गढ़नी मुन्न करने के परावह हो एक होना चहना है।

मनेपगुरशिम्पोर्क् वासन्त्रवे स निर्वेताः ।

क्ष्मुतः मोश अनेल्य पाने की क्षम्तु हो नहीं है । इस सम्बन्ध में किनोबा भावे के उद्^{गार} विचारणीय हैं —

ओ समझता है कि मोटा अवेन्टे हथियाने की बस्तु है, यह उसके हाथ से निकल जाता है, 'मैं' के बाते ही मोटा आग जाता है, सेका मोटा यह बाक्स ही करत है। 'मेरा' मिटने पर हो मोटा मिल्या है।

हरी प्रवार सम्बन्धिक मृत्ति बहुबार ये मृतिन ही है। 'मैं' समझ म्ह मार्च में मृत्य होने के लिए होने सपने सामझे मम्हिन्द में, सनाब में औन कर देना होता है। मृतिन वहीं मार्चित प्राप्त कर गरावा हैं जो कि बाने व्यक्तित्व वी नमस्त्र में, ननाब में किलीन कर है। सामार्थ शानियंव जिलाने हैं---

> मर्बरयागरच निर्वांश निर्वांशादि च मे मन. । स्मक्तम्य चैम्मया सर्वे वरं मर्स्वय दीयदान ॥

इस प्रकार यह धारणा कि भोशा का अस्यय आधानिकता का विरोगी है, गनत है। भोशा करनुता दुलों से मुक्ति है और मनुष्य ओवन के व्यक्तिया दुल्य, मानवीय संक्षों के कारण ही है। अस मुक्ति इंप्ली, हेप, होप, पृथा आदि के मवसी में मुक्ति पर्ने में हैं और रक्त पर में कर्मिकित और प्रमानिक दोनों ही युद्धि से सर्पार्थ में हैं। सुर, महत्तार एवं मानविक कैपों से मुक्ति कम में भोशा द्यारेवता और मार्थनता की कार्योकार भी नहीं किया जा करता है।

सन्द में हम नह सकते हैं कि भारतीय बीवन दर्शन की दृष्टि पूर्णदवा सामाविक स्रोर लोक्सनल के लिए अपलासील बने रहने नी है। उसकी एकपात्र मंगल कामना है—

> सर्वेदन मृत्यिनः सन्तु । सर्वे सन्तु निरामदाः । सर्वे सद्राणि परवस्तु । या गरिषद् बुःससानुदान् ।।

^{े.} सम्मप्तन और विज्ञान, पुरु प्रहे

मीतक चिन्तन के प्रारम्भ काल से ही स्विहित और लोकहित का प्रतन महत्वपूर्ण रहा है। मारतीय परगार्थ से एक मोर साजवान का कमन है कि ली, पन सारि सत्ये-कहत अपना रक्ता का अपना करायां नाहिए। निहार ने भी नहां है कि को सामं को छोतकर एपएं कराया है, जो मित्र (हुवरे लोगों) के लिए यम करात है कर मूर्ज ही है। हुनरी और यह भी कहा जावा है कि स्विहत के लिए सी सभी शीते है, जो सीकहित के मित्र जीता है, ससेक्स भीना सन्या है। निवक्त भीने में लोकहित के लिए सी

पारबास्य विवारक हरवर्ट स्पेन्मर ने दो इस प्रश्न को मैदिक मिद्राम्तो के चिन्तन को बास्तविक समस्या कहा है। यहाँ तक कि पारबास्य बाबार-शास्त्रीय विश्वारवारा में ती स्वार्य और परार्थ की धारणा को लेकर दो पक्त बन गये। स्वहितवादी विचारक जिनमें हारम, नीक्षी बादि प्रमुख है, यह मानने हैं कि मन्द्य प्रकृत्या नेवल स्वदित वा अपने लाम से प्रेरित होकर कार्य करता है । जब नैतिकता का वहीं सिद्धान्त ममुचित है जो मानव-प्रकृति दो इस धारणा के अनुकूल हो । इनके अनुसार अपने हिन 🖹 क्रिए कार्य करने में ही मनुष्य का खेय हैं। दूसरी ओर बैन्वय, यिन प्रमृति विचारक सामव भी स्वस्थवादी मनोवैज्ञानिक प्रकृति को स्वीकार करते हुए भी बौदिक आधार पर सह मिद्र करते हैं कि परहित की भावना ही नैतिक दिन्द से स्थायपूर्ण है अथवा मैतिक जीवन का साध्य है। " जिल परार्व की न्दार्च के बौदिक आचार पर मिद्र करके ही सम्तुष्ट नहीं हो जाने, वरन् आतरिक अंकुण (Internal Sanction) के द्वारा उसे स्थामाविक भी निद्ध करते हैं उनके अनुनार यह आग्तरिक अकुछ मजातीयता की भावना है। यद्यपि यह जनमनाद नही है, तयापि अस्वाभाविक या अनैसर्गिक भी नही है। दूसरे, जन्य विचारक भी जिनमें बटलर, शापेनहाबर एव टालस्टाय आदि प्रमुख है, मानव की मनोवैज्ञानिक प्रकृति में सहानुमृति, प्रेम बादि की उपस्थिति दिखाकर परार्थवादी या क्रीकमगलकारी बाचार-दर्शन का समर्थन करते हैं। प्ररबर्ट स्पेत्सर मे

र चाणक्यमीति, रे.६, पचतत्र रे।३८७

२ बिदुरनीति, ३६

सुमापिन-उद्घृत नीतिज्ञास्त्र का मर्वेक्षण, पृ० २०८

४. बही, पृ० २०५ ५. नीडिशास्त्र की ६. सूटिलिटेरियनिय २

५. नीविशास्त्र की क्ष्परेखा, पू॰ १३७ .

६. यूटिल्टिरियनिज्य, अध्याय २, उद्घृत नीतिश्वास्त्र की स्परेखा, पृ० १

हैकर बेड है, थीन, अरवन आदि अनेह समरातीन विचारकों ने भी मानवजीवन है विकित्त पत्रों का उसारते हुए यामान्त सुन्न (ज्ञान मुद्द) की अवस्थात के हारा चैन, बौंड और गीता का समान कॉन स्वारंबार कोर वरावंबार के बीच सम्बद्ध मार्चने वर प्रवास क्या है। मानव-वहारी हैं विवित्ताति हैं जनमें स्वार्थ और परार्थ के तान वाववद हुए में उपन्ति हैं। मानर क्षांत का कार्य वह कर्म है कि वह क्वार्यवाद वा परार्थवाद में है कियों एक विद्यान हैं। त्याची वा विशेष करें। जिल्ला कार्य वा व्यवस्था वा व्यवस्था वा विशेष करें। जिल्ला कार्य वा वृह है हि 'वजून' कीर 'प्याचे' है का मानुना केंद्राने का अवान को अवहा सामान के लहुन की इस नव में प्रानुत करें हैं। त्रियमें हिन भीर 'वर' के बीच सबसी की मध्यास्त्री की निराम्स्य किया जा स्थाप मारतीय आपार-धाने बहुँ तह और हिम कर में हव और वर के सबसे भी माराव हो समात काने हैं अपना स्व और पर के मध्य बारण समुजन की संस्थानन करने में पहुंचे हैं। इस बाय को बिहुक्या हु तैई हैंसू स्वाबवाद और उराजगान में भारत हैं में हैं अनुस्तारण जार नर के अन्य स्वाब्त स्वाद्व स्वाद स्वाद स्वाद स्वाद स्वाद स्वाद स्वाद स्वाद स्वाद परिमाना पर भी विचार कर लेना होगा । करोब में स्वादंबार आरमस्त्रण है और पराक्षार आरमस्त्रण है। मैकेजी निकां

है कि वह हम देवन वक्ते व्यक्तियन वाद्य प्रधानम् आध्यव्यक्ति व वक्तान्तः । व्यक्तियम् वाद्यक्ति विद्वित्ति विद्वित्ति विद्विति वि हरा तथा है सम्बंधार है हैंबर के साम्य की मिटि का स्वाप करवा के. हैताबार बाल में हेबार के कार का का का का अवास करना । हेताबार बाल में हेबार के कीर वार्षिक कीर बाल की वर्षित वर्षित है स्वारंत्री बहुत्वा मन्त्र है और ज पर्रावंत्री । वैन आचार्यक्षा थ हिनाश रूपन तियात्री है राम की बात कड़ता है। इस अर्थ से वह स्वापंतारी है। वह तर्वत है। कारतनात्त्वम् वा स्वत्या का मण्डल करवा है। विकास से वह क्यासाल स वात्रकारमः वा रचन्या वा नाम्यतः करता है, व्यक्त वाव हा वह व्यवस्थान स्व कोर यह मार्ने हि स्वचित्रक साध्य की विश्व स्ववंत्रक और दूबर के साध्य की विश्व हा प्रयान परिवेता है तो भी देन बार्च स्थानवार बार देन ए जार के कि हैं जो है। वह व्यक्तियात कामा है सीम वा निर्म्हित वा सम्बन्ध काम का का हरत है। है। होते हुनहें की कुष्टित है हैं प्रशासकीत होने हे बारण परास्ताओं भी की महिला में हुए में हुए में उत्तर के हुं अवस्थात होने के कारण पराणा वैर-गारता हा शाम सामादित ही हैं मेरिक मोर-बरमा एवं भोहदित की दिन जन्म सारवा में बर्द नवस्य संबेद्धिय क्षेत्रम हैं, वह मी सही बेटाम वा कस्या है। बर्दा में बर्द नवस्य संबेद्धिय क्षेत्रम हैं, वह जानने का कर वन हैं। वह वह वह स्थापन कर वा है।

कुरभावती मु श्रीक्षार्थित कुनाबात् शास्त्रमञ्जाता मा बन्ता । भूतिकारमा मु श्रीकार्थित कुनाबात् सम्बन्धित स्थापित स्था ्रियान्, बाहारे वह कप (मान) कारावा संभी वास्त्रमं है है से सा सन्त करने ि श्रीतक्षेत्रका, देशको (दिल्ली अनुवाद), पु॰ २३४ र. बाबारांग राजधारर अन्दर्

बाली और सबका कत्याण (गर्वोदय) करनेवाली है ।'" इससे ऊँवी लोकमगल की कामना क्या हो सकती है ? प्रदनम्यानरणमूत्र में कहा गया है कि मनवान का यह सुक्षित प्रवचन समार के सभी प्राणियों के रक्षण एवं करुणा के लिए हैं। व अन-सामना छोक-मान्त की धारका को रोकर हो खाये बढ़ती हैं। उसी सुत्र में खाये कहा है कि जैन-माराना के पाँचों महाजन सर्व प्रकार से लोकहित के लिए ही हैं। अहिसा की महला इसते हुए वहा गया है कि साधना के प्रथम स्थान पर स्थित यह अहिसा सभी प्राणियों का बस्याण करनेवानी है। " यह मगवती खड़िमा भयभीतों के लिए दारण के समान है. परियों के ब्राकाश गमन के समान निर्वाध रूप से हितकारियों है। ध्यासों की पानी के समान, भलो को भीजन के समान, समूद में बहान के समान, राजियों के लिए लीपिं के समान और अटदी में सहायक के समान है। विधंकर-नमस्कारमूत्र (नमीत्युण) में तीयंदर के लिए लोकनाय, लोकहितकर, सौकप्रदीप, समय के दाता झादि जिन विशेषणी का उपयोग हजा है, वे भी जैनद्रिन्ट की क्षेत्र मंत्रकारी भावना को स्पष्ट करते हैं। तीर्थ दूरी का प्रवचन एव वर्म-प्रवर्तन प्राणियों के अनुप्रह के लिए होता है. म कि पूजा या सरकार के लिए। पाँद यह बाना आये कि जैन-सायना केवल आतमहित, आतमक्त्याण की बात कहती है तो किर सीर्यंक्ट के दारा तीर्यंत्रवर्तन या संध-मजालन का कोई सर्व ही नहीं रह जाता. क्योंकि कैवत्य की उपलक्षित्र के हाद बार्डे अपने बत्याण के लिए कुछ करना रोप हो नहीं रहता । अतः मानना पहेगा कि भीन-साधना का आदर्श भारमगरयाय ही नहीं, बरन लोक-करपाक और है ।

जैन दार्गनिकों ने आरमहित की अपेता लोकहित की सदैव ही अधिक महत्त्व दिया है । जैन-दर्शन के अनुगार शापना की सर्वोच्य ऊँचाई पर स्थित सभी श्रीवन्युक्त आप्यारिमक पूर्णता की दरिद से स्थान ही होते हैं. फिर भी बारमहितकारियी और लोकहितकारिकी शब्दि के आबार पर उनमें उच्चावच्य अवस्था को स्वीकार किया थया है। एक सामान्य देवली (शीवन्युक्त) और तीर्थंकर में बाध्यात्मिक पूर्यंताएँ समान ही होती है, फिर भी अपनी लोगहितपासे दिन्ट के कारण ही तीर्यहर को सामान्य केवली की बरेशा भेटा माना गया है। बाचार्य हरियद के बनुसार वोशन्यक्तायस्या को प्राप्त इ. तेने बालों में भी चनके लोकोपकारिया के आचार पर शीन वर्ष होते हैं.--१ शीर्षेकर, र गणवर, ३ सामान्य वेवली 1

१. तीर्थंकर--जीर्थंकर वह है वो सर्वेहित के संदश्य को लेकर साधना-मार्ग में बाता है मोर मान्यात्विक पूर्वता प्राप्त कर छेने के करकानु भी शोकहित में समा

सर्वोद्यदर्गन, बामुख, पृ० ६ पर सद्यत ।

२. प्रस्तभ्याकरणपूत्र, राशिए १. बही, साशास्त्र थ, बहुरे, राहाद

६. सपद्रतीय (टी॰) शारीप

र्. *वर्श*, राशादर

आता है। २ गनवर--महत्रपीय-हित्र के संकला को लेकर सापना-तेत्र में प्रतिष्ट हो दे बाज और भागी बारवानिक वर्षता को बान्त कर होने पर भी नहानियों के दिए एर

बस्याण के जिए प्रपतनतील नाचक यगपर हैं । समुद्र हिए या वर्ण-नण्याण गणपर है फीवन का धोश होता है^य ।

 शामान्य केवली-आरम-कच्याल को ही जिलने अनुनी सुलाना का ध्येय दनाया है भीर जो इसी मापार पर सापना-मार्ग में बहुत होता हुवा आध्यात्मिक पूर्णता की स्यानिक करना है बड़ सामान्य केवणी कहनाचा है⁹ । सामान्य केवली को नारिभाविष शास्त्रावली में मण्ड-वेबली भी बहते हैं।

जैनपर्म में विष्वत्रस्याण, वर्गतन्याण और वैयश्निक एस्याण नी भावगात्री ही सेकर दरनुकुल प्रवृक्ति करने के कारण ही सायकों की से विभिन्न कशाएँ निर्पारित की गमी हैं, जिनसे विश्व-परमाण की प्रवृत्ति के कारण ही तीर्थ पूर की सर्वोदन स्थान स्थि जाता है। जिन प्रकार बौद्ध-विचारणा में बोधिगरव और सहँन के आदारों में मिननी है उसी प्रकार जैन विचारणा में सीर्यद्वर और सामान्य केवली के आदशी में सरवमता है।

दूसरे जैन-साधना में संघ (समाम) की नवाँचरि बाना नवा है। शयहित समस्त वैयन्तिक ताधनाओं से अधर है, संय के कत्यान के लिए वैयन्तिक साधना का परिस्थान करना भी मावस्यक माना गया है। भाषार्य कालक की कवा इसका उदाहरण है^ए।

स्थानागमुत्र में जिन दस धर्मों (कर्सांध्यों)" का निर्देश किया समा है, उनमें सथपर्म, राष्ट्रधर्म, नगरधर्म, धामधर्म और कुलधर्म का उल्लेख इस बात का सबल प्रमाण है कि भैनदेष्टि न नेवल कारमहित या वैयन्तिक विकास तक सीमित है, वरन उसमें शोकहिं या लोककत्याण ना अञ्चय प्रवाह भी प्रवाहित है।

यचपि जैन-दर्शन लोकहित, लोकमगल की बात कहता है परन्तु उसकी एक धर्य है कि परार्थ के लिए स्वार्थ का विसर्वन किया जा सकता है, लेकिन आत्मार्थ का नहीं। उसके अनुसार वैविधिक भौतिक अपलिख्यों की लोककत्याण के लिए समिति किया आ सनता है और किया भी जाना चाहिए, क्योंकि वे हमें जनत् से ही मिली हैं, वे संसार की ही है, हमारी नहीं। सांसारिक उपलब्धियाँ ससार के लिए हैं, अतः उनका

स्रोकहित के लिए विश्ववंत किया भारा चाहिए, लेकिन आध्यारिमक विवास या १. योगिबन्द, २८५-२८८ । र. वही, २८९ । ३. वही, २९० ।

Y. निशीयपुणि, गा॰ २८६० । ५. स्थानाय, १०१७६० ।

वैपत्तिक मैतिकता को लोकदित के नाम पर कुंडिन किया बाना वसे स्वीकार नहीं। ऐसा लोकदित जो वर्गति के विराय-पता बवया आप्यापिक मुख्यन के फिन्न होता हो, यह स्वीकार नहीं है लोकदित और बारमिहत के सम्यर्थ में उनका स्वीपनाषुत्र है— आप्यापित करों और यमाणक स्वीतिहत भी करों, लेकिन वहीं आरमिहत और कोकदित में दर हो और बारमिहत के कुच्यन पर ही लोकदित करित होता हो, वहीं आरमप्ताम हो थेया है।

आरमहित स्वार्षे नहीं है--बारमहित स्वार्षवाद नहीं है। आरमकाम बस्तुत निष्णाम होता है, क्योंकि उनकी कोई कामना मही होती । इसलिए उनका कोई स्वार्थ भी नहीं होता । स्वार्थों तो वह होता है जो वह चाहता है कि सभी नोग उसके दित के लिए कार्य करें । आरमार्थी स्वायों नहीं है उसकी दृष्टि दो यह होती है कि सभी अपने हित के लिए कार्य करें 1 स्वार्थ और आरमकश्याण में मौतिक अन्तर यह है कि स्वार्थ की सायना में राग और डेंप की वृक्तियों काम करती हैं खबकि आत्महित या आत्म-करमाण का प्रारम्म ही राग-देव की वृत्तियों को खीणता से होता है। स्वार्थ और परार्थ में समर्थ की सम्मावना भी तमी है, जब उनमें राय-देव की विश्त निहिस हो। राग-भाव या स्वहित को वृत्ति से किया जाने वाका परार्थ भी सच्चा लोकहित नहीं है, बह तो स्वार्य ही है । घासन द्वारा नियुक्त एव प्रेरित समायकत्याण अधिकारी बन्तुत. लोकहित का क्सी नहीं है, वह तो बेदन के लिए काय करता है। इसी सगह राग से प्रेरित होकर लोकहित करने वाला मो सक्बे अर्थों में लोकहित का कला नहीं है। उसके लोकतित के प्रयन्त राम की अभिन्यनित, प्रतिष्ठा की रखा, यश-वर्धन की भावता या भावीलाम की प्राप्ति के हेन् हो होते हैं। वैसा परार्थ स्वार्य ही होता है। सच्या आत्महित और सक्का लोकहित, राय-द्रेय से रहित अनासक्ति की मूमि पर प्रस्फुटिस होता है। लेक्नि वस जबस्था में न दो 'स्व' रहवा है न 'पर', क्योंकि जहाँ राग है बही 'स्व' है और जहाँ 'स्व' है वही 'पर' है। राग के समाव में स्व और पर का विभेद ही समाप्त हो जाता है। ऐसी राग विहीन भूमिका से किया आनेवाला आत्महिंद भी शीकहित होता है, और कोकहित बात्महित होता है। दोनो में कोई सबर्प नहीं, कोई हैत नहीं है । उस दमा में हो सर्वत्र आत्यदृष्टि होती है, जिसमें न कोई अपना, न कोई पराया । स्वार्थ-परार्थ को समस्या यहाँ रहती हो नही ।

वंन विचारणा के बनुवार स्वार्ष बोर पराये के मध्य शवी बनस्ताओं में सपरे रहे, यह असरपार नहीं । व्यक्ति वीते-दीह भौतिक जोनत के बात्यातियक जीवन की और उपर उठना वाला है, वीते-वीत साथे परार्य का संपर्ध में वाप्यव होता जाता है । वैन विचारकों ने परार्थ या जोकहित के तीन स्वर भागे हैं ?—

१. उर्घ्त बारमसापना-संबह, पू॰ ४४१ ।

हैं इस मोहरित, 3 बाद मोहरित और है पारवाजिक मोतरित । भैतः, कौंड सीट गीता का मगात्र को

) कार कोस्तीत्र का कोर्गाय कर है। सीरिक अस्ता थे। कोष का बाह्य बाहि तम् सारीहिक तेम के बारा कोरहित करता कोरहित का हात्य हुए स्वर है। यह का केन्द्रित के बाउन महिल हुई है। स्वरूपकेटी कान स्वरूपक स्वरूप है। यह का स्वरूपके महिला महिला हुई है। and a state of a state ्रामान्ति है । अत्यन्ति को भीति को भीति को अस्ति को स्वास्ति। इन है । अत्यन्ति को अस्ति को स्वास्ति के स्वास्ति को स्वास्ति । क्षेत्र प्रशासक के विश्व कर अग्रा का नाम की की नार साथ है। व्यवस्था के विश्व की की विश्व की विश्व की विश्व की व भूत प्रसिद्ध के बहुत साम्रास्त्र के बहुत साम्रास्त्र के प्रसिद्ध के साम्रास्त्र के अपने के स्थान के स्थान के स

. बार कार में का का निवास कर की स्थाप कार में अपन का है। स्थ काकर के कामण क्रमान्त्रम् सा वीमांत्रम की हे हैं हेरा क्षत सर सर अगरण कर तर are to actions technic as in a

क करणारिक काक्षातिक व्याप्त मान्यास को सर्वाक स्वर है। बर्वे अत्यास के करणारिक काक्षातिक व्याप्त है। का प्रतास के कार्य कार्य प्रतास का स्थाप का स्थाप का कार्य का का कार्य का $a_{\sigma}^{-1} \triangleq \frac{1}{4^{-1}} \left(\frac{1}{2^{d}} \left(\frac{1}{2^{d}} \left(\frac{1}{2^{d}} \left(\frac{1}{2^{d}} \right) \right) \right) \right) \left(\frac{1}{2^{d}} \left(\frac{1}{2^{d}} \right) \right) \left($

के दूर व प्रमाणक के विकास के ही विश्वास के ही विश्वसिक्त हमा है। के निवास में के करते हैं। में स्वित्सी ती से करते हैं। में स्वित्सी ती से करते हैं। में स्वित्सी ती से करते हैं। At 4 a with a same about the analysis and a same about the analysi The first of the f हित्र के के के विशेष की प्रतिस्थित की सम्माद्र की की सम् The state of the s The second straining to the second straining straining to the second straining strai The state of the s Negy to making And the same of th

S Park of the same & Park.

बोद-पर्य को महामान वाला ने हो कोकमंत्रक के जारूरों को ही क्यानी नैतिकता का प्राण माना। बही हो सामक कोकमान के आर्ट्स की सामक में परमृत्य निर्माण मी भी प्रदेशा कर देता है, उन्ने क्याने नैस्टिक्त निर्माण में कोई एवंच गृद्धी है। महामानी सामक कहता है—दूबरे प्राणियों को दुख हे खुराने थे जो आगन्द मिन्हा है, मही स्वत कार्य है। अपने निर्माण प्राप्त करना नीरम है, उनसे हमें बया कैना देना।

क्षकावतारमृत्र में बोधिसत्त से यहाँ तक कहरूबा दिया गया कि मैं एवतक परि-निर्दाण में प्रवेश नहीं करूँना जवतक कि निश्व के सभी प्राणी विमुक्ति प्राप्त न कर कें 12 साधक पर-इ.स-विमुक्ति में मिलनेवाले आनस्य को स्व के निर्वाण के आनन्द से भी महत्त्वपूर्ण मानभा है, और उसके लिए अपने निर्वाण सूख को उकरा देता है। पर-द:ल-कातरता और सेवा के आदर्श का इनसे वडा मकल्प और क्या हो सहसा है ? बौद्ध-दर्शन की लोकहितकारी दृष्टि का रख-परिपाक तो हमें आचार्य शान्तिदेव के प्रत्य शिज्ञास मुख्यय और बोधियर्थावतार में मिलता है। लोकपगण के आदर्श की प्रस्तुत करते हुए वे लिखने हैं, 'अपने मुख की सलग रख और दूसरों के दूख (दूर करते) में लग'। इसरो का संवक वनकर इस शरीर में जो कुछ बस्तु देल उससे दूसरी का हित कर। इसरे के इल में अपने मूल को जिना बर्ड बद्धत्व की निद्धि नहीं हो सकती। फिर ममार में सुल है ही कहाँ ? यदि एक के दू ल उठाने से बहुत का दू ल चना जाम हो अपने पराये पर हपा करके वह दु व उठाना हो चाहिए। व दोधिमस्य की लोकसेवा की भावना का चित्र पत्तुप करने हुए आचार्य लिखने हैं, "मैं अनावों का नाम बनुँगा, यातियों का सार्यवाह बर्तुगा, पार जाने की इक्तावानों के लिए में नाव बर्तुगा, में उनके लिए सेन बर्नेगा, धरनियाँ बर्नेगा । दीवक बाहने वालो से लिए दीवक वनेंगा जिन्हें शब्दा की आवश्यकता है जनके लिए में शब्दा बनुगा, विन्हें दास की आवश्यकता है उनके लिए दाम बर्नेगा. इस प्रकार मैं अवती के सभी प्राणियों की देवा करूँगा।" जिन प्रकार पृथ्वी, अन्ति आदि भौतिक वस्तुएँ गृज्यून आकारा (विस्वमण्डल) में बमे प्राणियों के मुल का कारण होती हैं, उसी प्रशास में आकाश के शीचे रहनेवाले सभी प्राणियों का उपजीव्य बनकर रहना काहता हूँ, जब तक कि सभी प्राफ्ती मुक्ति प्राप्त त कर कें ।⁴

साधना के साथ सेवा वी मावना का कितना कुन्दर समन्यप है। क्षेत्रसेवा, श्लोक-वरमाण-कामना के इस महार् बार्च्य की देशकर हमें बरवन ही थी मरतिहत्री

₹.	बोधिवर्गातार, ८।१०८	₹.	लकावतारस्य, ६६१
٦.	बोरियर्पावतार, ८।१६१		सदी /1949

७. वही, देशिक्ट १. वही, देशिक्ट

उपाध्याय के स्वर में बहुना पहता है, 'किननी उदास मावना है । विद्य-वेतना के ^{माप} अपने को आरमसान् करने की जिननी विद्धानता है। परार्थ में आरमार्थ की मिना देने का रितना अपादिव उद्योग हैं'।" आचार्य गान्तिदेव भी केवल वरीपरार या शोक बन्याय का सन्देश नहीं देने, वरन उस लोक-कन्याय के सम्पादन में भी पूर्व निष्ठाम, मान पर मी वल देने हैं। निकाम भाव में लोवकरपाय कैसे किया जाने, इसके लिए ग्रान्तिदेव ने जो विधार प्रम्तृत किये हैं। वे सनके मौतिकविन्तन का परिणाम है। गीठा के अनुमार भ्यक्ति देखरीय प्रेरणा को सानकर निष्टाय मात्र में कर्म करता रहे अवहा हतप को और सभी साथी प्राणियों को उसी पर ध्रय का ही अब मानकर सभी में आन्मभाव जागृत कर विना आकाला के कर्म करता रहे । के कम निरोध्वरवादी और अनारमवादी बौद्ध दर्शन में तो यह सम्मद नहीं था । यह तो आवार्य नी बौदिन प्रतिमा ही है, जिमने मनोवैज्ञानिक खारारी पर निटरामभाव से लीवहित की अव-धारणा को मध्यव बनाया । अयाज के नावयवता के जिस निदान्त के आधार पर बेंडले प्रमृति पारचारय विचारक लोकहित और स्वहित में समस्वय सामते हैं और उन विचारों की मीलिकना का दावा करने हैं, वे दिवार आवार्य शान्तिदेव के प्रयों में बढे स्पष्ट रूप में प्रकृष्ट हुए हैं और जनके आधार पर उन्होंने नि स्वार्थ कर्म-योग की संव धारणा को भी सक्त बनाया है। ये बहुने हैं कि, जिस प्रकार निरात्मक (अपनेपन के माब रहित) निज गरीर में अन्यासवया अपनेपन का बोध होता है, वैसे हो पूनरे प्राणियों के शरीरों में अध्यान ने का अपनायन उत्पन्त न होता ? अपीत इमरे प्राणियों के घारीकों में अध्यान ने अधन्त्रभाव अवश्य ही उत्पन्त होगा, क्योंकि जैने हैं प आदि अग गरीर के अवयव होने के कारण त्रिय होने हैं. वैये ही सभी देहधारी अगर के जबाद होते के कारण जिल क्यों नहीं होंगे?, अर्थान से भी सभी जगन के, जिनका में अवयद है. अधयद होने के कारण प्रिय होंगे, बनमें भी आत्मानाय होगा और सैरि मद में जियना एवं बारवमाव उत्पन्त हो। गया सी सिर यूनरों के दुःत दूर विसे दिना नहीं रहा जा गरेगा, क्योंकि जिमका जो दुन्त हा बहु उसमें अपने की सकार का प्रशन को करता है। यदि दूसरे प्राणियों को दूख होता है, ही हम ही उनने क्या ? ऐसा मानो तो हाथ की पैर का दू ल नहीं होता, दिर क्यों हाय में पैर मा करक निशानकर दुन्य में अमरी रामा करते हो ?" जीने हाय पैर का दुन्य दूर किये जिला नहीं ग्रह मकता, बैथे ही लगात का कोई और प्रतायक्त मदस्य दूनहै भागी का द स दूर किये दिना नहीं रह सकता । इन प्रकार खाकार्य समात की साव-यवता को निज्ञ कर तनके आसार पर लोकनेवन का सन्देश देने हुए आसे यह भी

१, बोद-दर्शन ओर बन्द मारनीय दर्शन, पू॰ ६१२ - १, बोरिनवर्शनदार, ८११९ १. वर्श, ८११४ - ४. वही, ८१९९

बौद-रर्गन भी आस्मार्थ और परार्थ में कोई भेद नही देवता । इतना ही नही, वह आत्याय को पशर्च के लिए समिति करने के लिए भी तत्य है : शेकिन समक्षी एक नीमा है जिसे बह भी उसी रुपये स्वीकार करता है, जिस रूप में भैन-विचारकों में प्रमे प्रस्पुत किया है। वह कहता है कि कोक्यमत के लिए सब कुछ न्योछावर किया या शक्ता है, यहाँ तह कि अपने समस्त सचित पुष्य और निर्वाण का मूख भी। सिनित वह उसके लिए अपनी नैतिकता की, अपने सदाबार की समित करने के लिए तुलार नहीं है। मैतिनता और सदाचरण को कीमत पर किया गया सोन-कस्याण सरे स्वीदार नहीं है। एक बौद्ध सायक विनसित खरीरवाली बैरवा की सेवा-राखवा हो कर तकता है, लेकिन जनको कामवासना को पूर्वि नहीं कर सकता । किसी भश्र से क्याक्स व्यक्ति को अपना भोजन मले ही दे दे, लेहिन उसके तिए बीर्य कर्ण का आवरण नहीं कर सरता। बौद्ध दर्शन में लोकहित का बही रूप आवरणीय है जो मैतिक शीयन के सोमासेय में हो । लोकहित नैतिक बोवन से ऊपर नहीं हो सरता । मैतिकता के गमाल क्यों को लोकहित के निय मर्मायत क्या वा सकता है. सेविम स्वय मैरिरचा को लही । बीड शिवारणा में लोकहित के पवित्र साम्य के लिए प्राप्ट या भनैतिरु गापन बचमति स्वीकार नही है । ठोकहित वही तक आचरणीय है वहाँ तक उनका मैडिक जीवन से अविक्षेत्र हो । यदि कोई लोकहित ऐसा हो जो व्यक्ति के नैतिक एवं आध्यारियक मुख्यों के बतियान पर ही सम्बंद हो, तो ऐसी दशा में 🕊 महत्रन दिन भाषरयीय नहीं है, बरन स्वय के नैतिक एवं बाध्यान्यिक मस्यों की उपस्थित ही मावरणीय है। यम्मपट में वहां है, व्यक्ति अपने अगुमावरण से ही आगुद्ध होता है भीर बगुम कायरण का सेवन नहीं करने पर ही यद होता है। यदि और अयदि प्रापेत स्पत्ति की भिन्त-शिन्त है । दुसरा व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को युद्ध नहीं कर सकता । इसनिए दूसरे व्यक्तियों के बहुत हिल के लिए भी अपनी नैतिक सुद्धि क्यों हित की हाति नहीं वरे और अपने शक्दे दिन और कन्याय को बानकर अगरी प्रास्ति में समे । मारा में बीड बाबार-दर्जन में ऐसा लोबहित ही स्वीकार्य है, विद्वका ब्यक्ति के

१. बोधियर्गेवतार, टाहेहद

२. वही, ८११०९

१. पाचवर, १६५-१६६

सारवानिक एवं नैतिक विकास से जिवरोय है। ओकहित का विरोध हमारी मीतिक उपनियों में हो महता है, लेदिन हमारे जाण्यात्मिक विकास से उनका विरोध नहीं रहता। मन्त्रा ओकहित दो व्यक्ति की स्थानिक सा मेतिक प्रयोद का मुक्त है। हम दक्ति क्योतिक क्या आय्यादिक अपनि में महान्य कोहित हो बौद-मायता का प्राप्त है। उन करवा में आरमार्थ और परार्थ अन्या-बलन नहीं नहीं है। होगा है। उन करवा है और परार्थ हो मारवार्थ कर जाता है, वह निजाब होगा है।

वचित्र बीद्ध दर्शन की हीनवान गामा स्वहितवादी और महायान गासा परितृतवादी भारमों के आपार पर विक्रमित हुई है, तथापि बुद्ध के मौतिक उपदेशों में हुमें वहीं भी स्विह्न और लोरहिन में एकान्तवादिना नही दिनाई देती । तयागत तो मध्यममार्ग की प्रतिप्रतासना के हेनू ही उत्पान हुए। वे भना एकान्साइटिट की कैसे स्वीकार करते। बार्यसमार्व के जारेमक भगवान बुद्ध में अपनी देशना में तो मोकहित और आस्मिहि वीच गर्रद ही एक गांग-गत्त्रन रचा है, एक मिरिरोप देशा है। लोकहित मीर मान्धीत बदनत मेरिनचा की भीमा में है, तबतक म जनमें विरोध रहता है और मे की मनर्च ही होता है। सर्वशास्त्र की माना से ने दोनों ही नैतिकता की महानाति की वो पणवारियों के अन होते हैं, जिनमें निपरीयना तो हैं, केंद्रिन अपायानतता नहीं है। मोर्चीट्र बीर बण्यदिन से विरोध भीर संवर्ष दो तर होता है, जब उनमें से कोई में भैरितना का जरिक्रमण करना है। भगवान शृद्ध वह बहुना यही या कि यदि आग्य-रित काना है में बह नैविक्ता की सीमा में करी और यदि परितन करना है तो बह भी वैतिकता को मोबा में, वर्ष की मत्रीया में रहतर ही करों। नैतितता और धर्म में दूर बोबर किए। बादे बाला साम्महित 'स्वार्थ साधन' है। और लोकहित सेवा का निरा बॉग है। बुद्ध ने अन्तर्गहर औन सामहित, वाना को ही नैतिक छ के शेंच में लाहर परमा बीर उनने बर्डिस्टर बाहा । श्री अस्मानिह उपाध्याय के शक्तों में 'बुद्ध के मीरिश हमदेगी में झान्यवाराच्य और परवाराच्या, सारमार्थ और गुरार्थ ब्याल और गेहा, दोनो का उनिर्प शास्त्र है। अन्यदन्त्रण और सरहरात्र से नहीं कोई विमानक रेखा नहीं की । सूचे क्रमार्ग क्षीत्र चरन्त्रं के सम्प्रक्षण का सामत वर क्षा देते हैं । उनके सन्धार पतार्थ वितर में अपनार्थ और परार्थ में अविरोध हैं। अपनार्थ मीर परार्थ में दिराप तो उसी कियाँ में रिमार्ट देश हैं अब हमारों दुरिट गांग देव तथा मोह से वृत्त होती है। शांग है व और जोड़ का प्रशास हाने वर प्रवर्ग कोई विशेष दिलाई ही नहीं देश । स्व और का का दिलाद हो। राम बीन होंच में हो हैं। जारी शाम-देव नहीं है, करी कीन बातर भीर कीन कराया है। जब महुच्या रामाचीव में। जार उठ जाता है। तब कही स जारपार्य

रे. बोदार्गन तथा अन्य सम्मान करिन, पुरु ६०१०६३०

रहता है न परार्थ, वहाँ की बेवल परमार्थ रहता है। इसमें वधार्थ कारवार्य और वधार्थ गरार्थ देनो ही एकस्प है। तथायत के बलोन्सारी विध्या सानस्प कहाँ है, 'कापुरामा, को राग से अनुस्तत है, औ राग के बखीन्त है जो डेप से दुस्ट है, देप के वजीमृत है, जो मोह से मुद्द है, मोह के बखीन्त है वह बचार्य कारवार्थ को भी नहीं रहतानता है, प्यार्थ परार्थ को भी नहीं पहचानता है, बचार्य उननार्थ को भी नहीं रहतानता है। राग का नाम होने पर, डेप का नाव होने वर "मोह का नाव होने पर—वह समार्थ कारवार्य भी रहवानता है, बचार्य परार्थ भी पहचानता है, यथार्य उननार्थ भी पहचानता है।"

पता, देंप और चोंद्र का बहान होने पर ही कनून कपने वास्त्रीक हित की, इतारी के बालांकि हित को बता बलने और दूसरों के बादबंकित बायुंकित या सामातिक दित को बात मकता है। बुद्ध के बनुतार पहुने यह बातों कि अपना और इतारें का वर्षका समात का बातांकिक कन्यान किवारें हैं। जो व्यक्ति करने, दूसरों के और माज के बातांकिक दित को वासे बिजा हो कोकहित, परिहेत एवं बारवाहित का प्रवास करता है, बह बन्दुन, किनों का भी हित नहीं करता है।

लेकिन राग, द्वीप और मोह के प्रहान के विना अपना और दूनरी का वान्तदिक हित किममें है यह नही जाना था सकता ? मध्यवत सीचा यह गया कि चित्त के गगांदि से पुत्र होने पर भी बृद्धि के द्वारा बारमहित या वरहित किसमें है, इसे जाना जा सकता है। लेरिन बुद्ध को यह स्वीकार नहीं था। बुद्ध की दृष्टि में तो शय-देण, मोहादि चिल के मल है और इन मतों के होने हुए कभी भी समार्थ आस्महिन और परहित की जाना नहीं जा सफ्ता वृद्धि तो अन के समान है, यदि उन में गदनी है, विकार है, चंदलता है हो वह यथार्थ प्रतिविद्य देने में क्यपंप समर्थ नहीं होता, ठीक इसी प्रकार रागन्द्र'य ने युक्त बृद्धि भी ययाची स्वृद्धित और लोकहित को बताने में समय मही होती है। बुद एक सुन्दर रूपक द्वारा यही बात कहने हैं मिलुओं, जैमे पानी का वालाद गदला हो, सकत हो और कीमड-युश्य हो, वहाँ किनारे पर लडे अखिवाले भारमी को न नीपो दिखाई दे, न शक्ष, न इनर, न पत्यर, न चलती हुई या स्पिर मछनियाँ दिलाई दे । यह ऐसा क्यों? जिल्लुओं, पानी ने बंदला होने के कारण। इसी प्रशास मिशुओं, इनकी मम्मावना नहीं है कि वह निशु मैंले (राय-द्वेशदि से युक्त) वित्त से बारमहित बान सहेगा, परहित जान सहेगा, उभयदित जान महेगा और मामान्य मतुष्य पर्म से बदकर विजिष्ट आर्य-कान दर्शन की जान सकेंगा। इसकी मन्नावना है कि भिन्नु निमेंत वित्त से बारमहित को जान सनेगा, परहित को जान सनेगा, उनगहित को जान सकेगा, सामान्य मनध्य धर्म से बडकर विशिष्ट आर्य-दर्शन को जान सकेगा ।

१. बंपुसरनिकाय, देशकर

प्रपान तन्त्र परोपनार ही है, सर्वाण हमें बस्पारम या परमार्थ का विरोधों नहीं होता भारिए । गीता में भी जिन-जिन स्थानी पर स्वीकृति का निर्देश है, बही निर्मागता की धर्न है हो । निष्याम और आध्यारिमक या नीतक तत्वो के अविरोत्र में रहा हुत्रा परार्थ हो यीना को मान्य हैं। गोता में भी स्वार्थ और वरार्थ की समस्या का मक्स हल मामान् नर्वमुतेषु की भावना में खोजा शया है । जब सभी में आरमदृष्टि उत्सम ही जानी है तो न स्वार्य रहता है, न परार्थ, क्योंकि जहाँ 'स्व' हो वहाँ स्वार्थ रहाँ। है। जर्रा पर हो, यहाँ परार्थ रहता है। लेकिन सर्वारमधाय में 'स्व' और 'पर' नहीं होते हैं. अज. उस दमा में स्वार्य और परार्थ भी नहीं होता है । वहाँ होता है नेपड परमार्थ । मौतिक स्थापी स कपर परार्थ का स्वान मझी को मान्य है । स्वार्थ और परार्थ के नान्त्रण में भारतीय आबार-वर्णनों के दृष्टिकोण की अनुहरि के इस कवन से अनीमोर्डि मममा जा गरता है-प्रयम, जो स्थार्थ का परित्याय कर बरार्थ के जिए कार्य करी है दे म'ान है, दूगरे, को स्वार्ण के अविशोध में परार्ण करने हैं अर्मान अपने दिनों ला हरत नहीं करते हुए लोकदित करते हैं वे सामान्य बन हैं, तीमरे, जो स्वहित के निए वर्रात्त का हतन करने हैं वे अपम (शक्षाम) कहे जाते हैं, सेहिल कीमे, जी निर्माह है दुगरों का अर्रिय करते हैं उन्हें क्या कहा जात. वे तो सबमाधम है । फिर भी हैं बर दर्भ रमा होता कि मारतीय विस्तान में परार्थ या लोडदिन अस्तिम तरव नहीं 🖟 । ४५नव नम्ब है गरमार्थ वा आस्मार्थ । पारबास्य आचार-दर्शन में स्वार्य और परार्थ की नगररा का सर्-१म हरु सामाध्य गुप्त में सोत्रा बया, खबकि विशेष रूप से जीन दर्शन में भीर रायण्य कर ने समय भारतीय विश्वत में इस समस्या का हुल परमार्थी से अप्रकारों में कोना गा। नैविक भेगना के विकास के साथ लोडमगुल की सापना बरानीय विस्तान का ज़लतान शाध्य रहा है।

रेनो मोबर्गनम की अपरेक्त प्रापता का प्रतिविद्य हुएँ आपार्य शानिहर है रिजापक्षका नामक काम में निजना है। हिन्दी में अनुदित बनारि निम्न गणियों सनतेन हैं ~~

मनीय हैं --इस मुख्य जननाइ में,
इंगर दर्शन सम्माणन गीपिय दिर्सात दिशीन हैं;
इंगर दर्शन सम्माणन गीपिय दिर्सात दिशीन हैं;
इसमें बहुनामी दिश्ले हैं।
सो बाज सब में सीम दायम प्राप्त में प्रतिकृति हैं,
में मुख्य हो निदस्ता हैं, सम्माणन हो नय प्राप्त हैं,
मूर्ण इस्त में प्रमाल में प्रमाल हो नय प्राप्त हैं,

र्शहत बनाम सोगहित

- 6

शाधार कर्म है। २. वर्ण परिवर्तनीय है। ३ थेट्ट्य का आधार वर्ष या स्वयंगत नहीं, वर्त् नैतिक विकास है। ४ नैतिक साधना का द्वार समी के किए समान वर से बुंग है। चारों हो वर्ष समय-नाल्या में प्रवेश पाने के अधिकारी है। यादि प्रमानित समर नै समय-नाल्या में चारों ही वर्ष प्रवेश के अधिकारी है। यह आमिक्क प्रमाणी है नित्र है। लेकिन परवर्षी और आमधारी ने साताझू नष्ट्रण साहित आदि-ज्युद्धित और सट, पारो शादि कर्म-वृद्धित कोमो को यानग-नाल्या में प्रवेश के अधीन्य माना। होक्त यह की विचारपारा का मीत्रिक समस्यव गहीं है। यह जास्म-परम्पर वर प्रमाप है। इन प्रयवद्या का विचान करिनेको आस्पर्त ने इनके किए याद कोशक्यवार का ही को दिन है, जो अपने आपने कोमें दोस ठर्फ नहीं वरत् क्या परम्परा के प्रमाव का ही हो दिन है। वह मान का दिना में दिक्तिक प्रवेश में दिन्त क्या परम्परा के प्रमाव का ही होई दिन है। के प्रमाव का नियंग तथा गृह की मुनित नियंग की अवधारपारी विकत्तित हुई है, वे मैं बाह्यम-परम्परा का नियंग तथा गृह की मुनित नियंग की अवधारपारी विकत्तित हुई है, वे मैं बाह्यम-परम्परा का नियंग तथा गृह की मुनित नियंग की अवधारपारी विकत्तित हुई है, वे मैं बाह्यम-परम्परा का नियंग तथा गृह की मुनित नियंग की अवधारपारी विकत्तित हुई है, वे मैं बाह्यम-परमप्ता का नियंग तथा गृह की मुनित नियंग की अवधारपारी विकत्तित हुई है, वे मैं बाह्यम-परमप्ता का नियंग स्वाप्त है।

बोद्ध साबार बांग में बर्ण-व्यवस्था—बोद्ध काचार-रार्ग भी वर्ण-वर्ष का निर्देश में करता है, हेरिक वह उनको कममान बावार वर स्थित नहीं सामता है। बोद्ध-वर्ष के मृतार भी वर्ण-वरवा जम्मता नहीं, कर्मण है। बच्चों के ही समुख्य बाद्याग, धर्मिय, वैष्य या गृह बनता है, ने कि उन कुलों में जनक लेने साम है। बोद्धामारों में जातियार के सामता के स्थेत प्रतमा मिल्ले हैं, लेकिन उस वसका मृतायम मही है कि स्नादि सा वर्ण सामरा के सामार पर बनता है, न कि अस के सामार पर। मत्यान हुन के स्व क्ष्म के सामार पर बनता है, न कि अस के सामार पर। मत्यान हुन के स्व क्ष्म वार्यावश्य का निरमत किया है, बही आहित उनका सामर्थ धरीर एका सामर्था। विकेष के मही, समाना आदिवार से ही है। बुद्ध के सनुवार सम्म के सामर प्रथम निरम वार्ष के मानिवार की स्वापना सही की वा मत्यी। मुत्तानात के निर्म प्रथम में इस बांत की स्थाप कर सामा वा स्थाप है

र्षांनाक पूर्व मद्दान्न जानियार कामान्यी दिवार की केकर बुद्ध के मानून उपीया होते हैं। बीनव्य बुद्ध से नहते हैं, "बीनवा! आनि-चेर के दिवस में हमारा दिवार के सदान नहता है कि बाइन कमा से होता हैं, से हो कमें से बनाता हूँ। हमनोग एँ हमरे को नवतत नहीं कर मनते हैं, प्रगतिए मानुद्ध (नाम से) दिक्सार आगरे (गैं रियर में) दूनने बादे हैं।"

न्द करते हैं, "हे बॉलफ ! मैं समय समार्थ अप से जालियों के आदिनोंद में बराना है दिससे दिन्य-दिनाय आदियों होती है । तथु मुख्यों को बातो । वस्ति वे हम क्षरी बराना है नियसे करते, दिर भी तमने बाजियर काला है दिनाने स्थान-दिना आदियें होती है। मोटों, पत्रों और बॉल्टोतों तक से जाजियर काला है दिनाने स्वाहें पत्रों देश

रे. प्रचन-मारोजन्य १००

ज़ांतिचां होती हैं । छोटे-बड़े जानवरों को जो जानों, ..डनमें भी जाति गय करान हैं जिससे जिन्न-जिन्न जातियों होती हैं । जिस्र जकार इन जातियों में मिनन-जिन्न जातिमय रुक्षण है, उस प्रकार सनुष्यों में जिन्न-जिन्न जातिमय रुक्षण नहीं हैं ।

"बाह्मण माता की कोख से उत्पन्न होने से ही मैं किसी को बाह्मण नहीं कहता । को सम्मित्तालों है (बहु) पानी कहताता हैं, जो व्यक्तिन हैं, तृष्णा रहित हैं, उसे मैं बाह्मण कहता है। न कोई जग से बाहम दोवाई को त्या के लग जग से बाहमण । बाह्मण कमें हे होता है और सवाह्मण भी कमें से । इनक वर्ष से होता है, शिल्पी कमें से होता है, विल्क्ष कमें से होता है, और वेषक भी कमें में होता है, पौर भी कमें से होता है, मौद्या मी कमें से होता है, मायक भी कमें से होता है और राजा भी कमें से होता है।

इस प्रकार बुद्ध जन्ममा जातिबाद के स्थान पर कर्मणा जातिवाद की भारणा की स्वीकार करते हैं, लेकिन कर्मणा जातिबाद की मान्यता में भी बुद्ध न दी यह स्वीकार करते हैं कि वैयक्तिक दृष्टि से जातिबाद कोई स्थायी तरव है, जिसमें अन्म क्षेत्रे पर या उस व्यवसाय के चयन के बाद परिवर्तन नहीं कर सकता और भ यह है कि व्यवसायों की दृष्टि से कोई उच्च और कोई नीच है। बुढ वाह्यमों के खेच्छर को भी स्त्रीकार मही करन । उनका कहना है कि कोई भी मनुष्य आपरण (नैतिक विकास) के आधार पर श्रेष्ठ या निकृष्ट होता है, न कि जाति या व्यवसाय के आचार पर । भगवान बढ की सपर्यंबत धारणा का स्पन्टीकरण मण्डिमनिकाय के वस्तरायनमूल में मिलता है, जिसमें भवदान बढ ने जाति-भेद सम्बन्धी निम्मा भारणाओं का निरसन कर चारों दगों के मोक्ष या नैतिक दादि की घारणा की प्रतिस्थापना की है । उक्त सूत्त के कुछ महत्वपूर्ण अंद्य निम्न प्रकार हैं। हे गीतम ! श्राह्मण ऐसा कहते हैं-दाह्मण हो श्रेष्ठ वर्ण है. इसरे वर्ण छोटे हैं । बाह्मण ही जुवल वर्ण है, दूसरे वर्ण कृष्ण है। बाह्मण ही गुद्ध है, अवाह्मण नहीं । ब्राह्मण ही ब्रह्मा के औरस पूत्र हैं, उनके मृथ से उत्पन्न है, ब्रह्मनिमित हैं, ब्रह्मा के दायाद (उत्तराधिकारी) है। इस विषय में आप क्या कहते हैं ? सद ने इमका प्रतिवाद करते हुए वर्ण-व्यवस्था के सम्बन्ध में अपने दक्तिकोण को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया है।

बहान कहना मुठ है—आवक्तापन वाहाणों भी बाहावियाँ क्षुतुमती एव गाँमणी होती, प्रवत करती, हुप पितादी देवी जाती हैं। वीनि से उत्तन्न होते हुए भी वे ऐमा कहते हैं कि बाहाग ही भोक वर्ष है। इस प्रकार मुद्ध बाहाण के बहाा के मुख से उत्तन्न होने की बारणा का सक्यन करते हैं।

मुत्तनिपात, ३५।३-३७, २७-५९

२. मग्सिमनिकाय २।५।३-उद्धृत-जातिमेर और बृह, प० ७

क्यां-परिवर्तन सम्भव है—की क्या मानने हो ब्रास्टकारन ! तुमने मुना है रि सर्ग, कम्बोन कोर इनदें भी सीमान्त देशों में दो हो वर्ण होने हैं आर्थ और दान (पुन्तर) आर्थ भी दान हो सकता है कीर दान भी बार्य हो नकना है।

हीं, मैंने मुना है कि यदन और बस्बोज में ऐना होता है। इस आगर पर बुड वर्ण परिवर्तन को सम्भव मानते हैं।

रिवर्तन को सम्भव मानते हैं ! सभी साति सनान है—को क्या मानने हो आद्यकायन ! शांगद प्राणिष्टिमक, वोर

दुगवारी, हुटा, बुनहस्मोर, बटुमापी, बरबादी, होभी, हेवी, मुटी घारणा बारी हैं ही मरीर छोड सरते के बाद मण्ड से चरला होगा था नहीं रे बाउणा, बेया, पूर्र, प्रॉप्ट हिमक हो, तो मरफ में चरणन होंगे था नहीं ? हूं बीतम वार्षिय भी प्राणितिक हो तो मरफ में चरणन होंगा कोर बातजा, वैंदर, सुद्ध भी !'

हा ता तरक म जायन हाण जार कालन, वस्तु सुद्ध सा ।
"ते बया मानते हो बारवलायन वित्रत बाह्यल ही आर्थाल-हिंगा से वित्रत हो, है सच्छी गति प्राप्त कर स्वर्ण कोग में बायन हो सबता है और शांत्रम, हैंग्स, हुँ, हुँ,

धर्म नहीं।"
"नहीं, हे गौतम! बाजिय भी यदि प्राचिहिता से बिरत हो, तो अच्छी गर्नि शाद

कर स्वर्ग होक में उरपन्त हो सबता है और बाह्यण, वैश्य, मूह वर्ग भी।"
"तो क्या मानते हो लायकायन ! क्या बाह्यण ही वैर रहित, हेप रहित मैत्री किन

भी मातना कर सनवा है, सनिय, सैदय, और शूर नहीं।"

इस प्रकार बुद्ध स्वयं कारवलायन के प्रति उत्तरों से ही सभी वातियों को समानत का प्रतिपादन करते हैं और यह बताते हैं कि सभी नैतिक विवास कर सकते हैं।

प्रभावपादन करत हु लाद यह वतात हु कि समा नातक विवास कर सकते हैं। साचरण ही स्टेंट हैं—की नया सानते हो आदवलायन ! सदि यहाँ दो प्राप्तक लुक्स माई हो, एक अध्ययन करने वाला, ट्यनीत, विस्तृ ट्रारीत, पारी हो, हैं^{गई}

अध्ययन न करने बाला, अनुवनीत, विश्व श्रीक्ष्यान, पुष्पास्मा हो। इनमें ब्राह्मने सर्थ. यह या बहुताई में पहले क्लिको सीमन करायेंगे।"

वह सामक्रक जो आध्ययन करने वाला, अनुप्रोत, किन्तु शीवर्यः अध्ययन करने वाला, अनुप्रोत, किन्तु स्वीवर्यः

श्रुवाणधर्मा है, उसी को ब्राह्मण यहले श्रोजन करायेंगे। दुशील, पापपर्मा को डान देने से क्या सहायन्त्र होना ?"

"आरवलायन ! बहले तू जानि पर पहुँचा, जाति से समों पर पहुँचा, प्रत्रों से हर्ष तू चातुर्वर्गी-गुद्धि पर जागया, जिसना में उपदेश करता हूँ। दे

गोता तथा वर्ष-व्यवस्था--- वास्तव में हिन्दू बाधार-दर्शन में भी वर्ण-स्वतंथा प्राप

१. माजिमनिकाय २।५।३-उद्युत वातिमेद भौर बुळ, पु∙ ८ २. माजिमनिकाय, २।५।३

₹७ वर्णायम-व्यवस्या

पर नहीं, बरन् कर्म पर ही आचारित है। गीता में श्रीकृष्ण स्पष्ट कहते हैं कि चातुर्वर्ष्य स्यवस्था का निर्माण युण और कर्म के आधार पर ही किया गया है। " डॉ॰ राधाकुरणन् दिसते हैं, यहाँ जोर गुण और कमें पर दिया गया है, जाति (जन्म) पर नहीं । हम किम वर्ण के है, यह बात लिंग या जन्म पर निर्भर नहीं है । स्वभाव और व्यवसाय द्वारा निर्घारित जाति नियत होती है। विशिष्टर कहते हैं, "तत्वज्ञानियों की दृष्टि में केवल थाचरण (सराचार) हो जाति का निर्धारक तत्त्व है।"3 वनपर्व में कहा गया है, "बाह्मण म जन्म से होता है, न सस्धार में, न कुल में, और न बेद के अध्ययन से, बाह्मण केवल वत (आवरण) से होता है।"" बौद्धानम मूल-निपात के समान महर्षि अति भी कहते है, जो ब्राह्मण धतुप-बाण और अरच-बारव केकर युद्ध में विजय पाता है वह सनिय क्ट्रलाता है । जो बाह्मण खेती बादो और गोपासम करता है, जिसका व्यवसाय बाणिग्य है वह बैश्य बहुलाता है। भो बाह्मण लाभ, लश्य, केसर, दूव, मक्खन, शहद और मांस बेचता है वह शूद्र कहलाता है। को ब्राह्मण चौर, तस्कर, नट का कमें करने याना, मास काटने वाला और याम-मस्य भोशी है वह नियाद बहुलाता है। क्रियाहीन, मुर्ख सर्व वर्म विवर्शित, सब प्राणियों के प्रति निर्देश ब्राह्मण बाण्डाल बहुलाता है।"

दो॰ भिसन लाल आहेव ने भी गुण-कर्म पर आपारित वर्ण-व्यवस्था का समर्पन किया है^६--(अ) प्राचीन वर्ण-प्रवस्त्वा कठोर नही थी, लचीशी थी। वर्ण-परिवर्तन का अधिकार व्यक्ति के अपने हाथ में था, क्योंकि आवरण के कारण वर्ण परिवर्तित हो जाता था ! उपनिपशें में विजत मरवनाम जावाल की कवा इसका उदाहरण है ।" सरय-काम जावाल की मध्यवादिला के आधार पर ही उसे ब्राह्मण मान निया गया था। (व) मनस्मृति में भी वर्ण-परिवर्तन का विधान है, लिखा है कि "सदाचार के कारण गृह भाद्राण हो जाता है और दुराजार के कारण बाह्मण भूद हो जाता है। यही बात श्रवित और वैष्य के सम्बन्ध में भी है।" नैतिक धृष्टि से गीता के आवार-दर्शन के अनुसार भी कोई एक वर्ण दूसरे वर्ण से श्रीष्ठ नहीं हैं, न्योंकि नैतिक विकास वर्ण पर निर्भर नहीं होता है। शॉवन स्वामाबानुकुछ कियो भी भी वर्ण के नियद क्यों का सम्पादन करने हुए नैतिक पूर्णता m शिद्ध को प्राप्त कर सकता है। व वर्ण-स्वत्रस्था के द्वारा निहित कर्म नैतिक दृष्टि से अब्छे या बुरे नहीं होते, " सहज कर्म सदीय होने पर स्यान्य नहीं होते । "

१. गीता ४।१२, १८।४१

२. मगवद्गीसा (श०), पृ० १६३

व उद्भूत-मगवद्गीता (रा०), पू० १६३ ४, महामारत वनपर्व ३१३।१०८ ५. अविस्मृति, ११३ ३४-३८०

६. भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहान पु॰ ६२५

ए. छान्दोग्य**ः ४**।४ ८, मनुस्मृति, १०१६५ ९ गीता, रेटाप्रपन्द

to, aft, tenes

११, वहा, १८१४८

स्पोरित में नीतिक विशास को अनम्ब मही करते । सन्तुनः गीता से कां-कारमा में रीते जो सुण-कर्म मी मारणा है, उसे किपिन् सहराई से समझना होना । मून बीर दर्ग में भी, सर्च-निर्पादण में मुख्य प्राथमिक है, कर्म का मानन तो दवन हो सुण पर किराई में गीता वा मुख्य उपनेदा अपनी शोग्यता या मुख्य के आसार पर कर्म करने कहें । वार्षी करना में कि सीवार्ण करना क्यान स्वार्ण कराएन कर है। वार्षीय

गाता का मुक्त उपराय कारा सामाता या गुण के सागार पर कम कर के कि कहना है कि सोम्यता, स्वारंत करवा गुण के सागार पर कम कर के कि सामाजित की सामाजित के सामाजित

स्तरमध्यता साती है।

भीता में बर्ण-व्यवस्था के पीछे एक सनीवैज्ञानिक आपार रहा है दिनाचा सर्वर्श
भीता में बर्ण-व्यवस्था के पीछे एक सनीवैज्ञानिक आपार रहा है दिनाचा सर्वर्श
भागान के सामारकण्या की निवासिकारिक ताहत या नेतृद्व-वृद्धि, में बहुत्तानराज और
साधित होंने की प्रवृत्ति का छेवा भागाना पायी जाती है। सामाप्यतः मनुष्यों है ए
वृद्धियाँ का तमारक क्य के विकास नहीं होता है। प्रत्येक मनुष्यां है ए
वृद्धियाँ का सामारक क्य के विकास नहीं होता है। प्रत्येक मनुष्यां है ए
पायाप्य होता है। हुसरी जोर सामारिक दृष्टि से सामार-व्यवस्था में चार प्रमुख कार्ष है
रिसायपु र रहाणु १, उपार्यन और १ हेवा। अब्द यह साचरक माना गया है।

ै. विरायु, के रहाजु, के उपानंत कोर भे तेवा । अता यह सारदरक नाता गया है। स्वादित सारी स्वाया में जिया बुर्वित का सायान्य हो, उपाने स्वनुसार सामाजिक करारचा में अपना वार्ष बुने । दिवाने बुद्धि देवित्य और विद्याला वृत्ति हो, यह शिवाण का कार्य करें, विसाने साहय और नेतृत्व वृत्ति हो यह रहाण का कार्य करे, विमाने विनियोग तहाँ में विद्याला हो के यह उपानंत का कार्य करे और जियाने देव्याला या विद्याला होते हैं यह विद्याला के हैं। एक प्रकार जिल्लामा, नेतृत्व, विदित्योग कोर देव्य कोर स्वादित कुर्वित हो स्वादाल पर प्रियम्, रखान, उपानंत्र बोर नेवा के सालादितक कार्यों का विभावत्य हिया गया और हांसे जायार पर कालाः साहुत्य, शास्ति, वैद्या कीर एह ये वर्ष वे ने हस रवमाल के क्षण्ट्रास क्याया था चृति में विवासन में अवेटल और होत्यत का

सामाजिक वर्धव्यों का पालन कर रहा है, यरन इस बात वर निर्मार है कि वह तनका र. मगबद्वीता (राक), पुरु वै६६ र. बीता, देशांट, बीला (गांक) देशांर, पट

नोई प्रश्न नहीं उठया । गीठा दो रफ्ट रूप से बहुवों हैं कि जिज्ञासा, तेतूरा, स्वरद्वित और दैग्य मारि सभी बृत्तियों निगुणारमक हैं बढ़ा सभी दोपपूर्ण हैं । गोठा को दृष्टि में नैठिक भेटतल इस बास पर निर्भार नहीं है कि स्वस्ति क्या कर रहा है या किन पानन हिस निन्दा और योप्पात के बाव कर रहा है। बीता के बनुगार मार्ट एक पूर करने वर्तमों का पानन पूर्व निरुध और कुमानत ने करता है तो बहु अनेक्टिक और अहुगाक बाहुम की अरोग निर्मा के पेटल हैं। बीदा के बाधार-दान ने में यह वितिष्टता है कि बहु भी जैन-दान के पानन पापना पढ़ का डार एमी के लिए क्षोन्त देता है। गीता सर्विष वर्षान्य पाने में स्वीकृत करती है, तेनिन उत्तरा कर्णाव्य पाने तो मार्यानक सर्वाद के कार्यान क्षान करती है। मोर्चा सर्वाद के कार्यान के लिए के लिए क्षान करता है। गीता सर्वाद के बाद में ही हैं। आक्षात्मक विकास कर स्वादा के कार्यान के निम्मानतीय पाने का स्वादा के स्वीकृत करता है। भीता स्वाद्य का प्रमान करता है है। स्वीकृत सर्वाद करता है।

थी हुण्य स्वयः बहुते हैं कि स्थासित आहे मारान्य दुग्यागि नहा हो भाषा रही, मुख्य सेंस हो अपना साध्यम सा रार्थाण हो, यदि यह सम्बद्धाने भीय वात्रान्य सारा है। यह लेक गाँव कर हो जाता है कि मीता के अनुवार जाम्यारिक विचान का द्वार गाँव के किए तथान कर हो जाता है कि मीता के अनुवार जाम्यारिक विचान का द्वार गाँव के किए तथान कर हे गुणा हुआ है। तो लोग तिंक सा आध्यारिक विचान के मोता के स्वरंग के स्वरंग मारांच मारांच है। तथान के स्वरंग के का मारांच है है भागित में हैं। गीता के आध्यार-परंज के अनुवार नायादिक स्वरंग के स्वरंग के स्वरंग में की स्वरंग के स्वरंग में की स्वरंग के स्वरंग में स्वरंग के स्वरंग मारांच कर है। भागित में हैं। गीता के आध्यार-परंज के अनुवार नायादिक स्वरंग के स्वरंग की स्वरंग का साध्यारिक विचान के स्वरंग में की स्वरंग कर साध्यारिक स्वरंग तथा है। स्वरंग के स्वरंग मारांच मारांच स्वरंग साध्यारिक स्वरंग में के स्वरंग मारांच मारांच स्वरंग साध्यारिक स्वरंग में स्वरंग साध्यारिक स्वरंग मारांच स्वरंग साध्यारिक स्वरंग में स्वरंग साध्यारिक स्वरंग में स्वरंग साध्यारिक स्वरंग साध्यारिक स्वरंग स्वरंग से हैं।

इस प्रशार जैन, बीद और गीता के आचार-वर्धन वर्ण-स्वरूप के सम्बन्ध में समान दृष्टिकोण रक्षत्रे हैं। सकी दृष्टिकोण की सक्षेत्र में इस प्रशार रखा का स्वरूप है—

- रे. वर्ण का आधार जन्म नहीं वरन् गुण (स्वभाव) और कर्म है।
- वर्ष अपरिवर्धनीय नहीं है। ब्यक्ति ब्यने स्वयान, आवरण और कर्म में परिवर्धन कर वर्ण परिवर्धित कर सकता है।
- १. वर्ण का राज्यक्य सामाजिक वर्तव्या से हैं, लेकिन कोई भी सामाजिक वर्तव्य यां व्यवमाम अपने आगर्य क चेक हैं, न होने हैं। च्यक्ति की बेल्टा बोट होनदा जनमा अपने आगर्य के चेक हैं, न होने हैं। चित्रकार कर्तव्य वह महीं, वहन् उससे नैविक निकटा वह निर्माद के स्थान के स

रे. गीवा, ९१३०, ३२, ३३

क्षाध्यम-धर्म

'बाथम' सन्द श्रम ही बना है। श्रम का अर्थ है प्रवास सा प्रपत्ने। जोदर है विभिन्न माध्यों की उपलब्धि के लिए प्रत्येक आयम में एक विरोध प्रयत्न होता है। जिम प्रकार जीवन के चार साध्ये या सूत्र्य— धर्म, अर्घ, काम और मीप्र भाने गरे हैं, स्त्री प्रकार जीवन के इन बार नार्यों की उपलब्धि के लिए इन बार आयमों ना स्थित है। वजाचर्यायम नियानंत के लिए हैं और इस रूप में वह बारों ही आधर्मों भी एक पूर्व नैवारी रूप है। गृत्यायम में अर्थ और काम पुरुषयों की मिद्धि के जिए किंग प्रयत्न रिया जाता है जबकि धर्म पुरुषाय की सापना बानप्रस्थापम में और मेल पुरुपार्य की जावना सन्यास आध्यम में की जानी है। यह स्मरणीय है कि बर्न का निजान्त गामाजिक ओवन के निए हैं, हिरतू आयम का निजान्त वैद्यत्तिक हैं। आपर निद्धान्त यह बताता है कि व्यक्ति का आयारियक लक्ष्य बदा है, उसे अपने को सि

प्रकार के चलता है तथा अस्तिम सदर की प्राप्ति के लिए उसे कैमी हैरारी करनी है। हा॰ पाणे के अनुमार आध्यम-मिदास्त एक उत्पृष्ट पारवा थी । भने ही इसे भनी मीं किसान्यित नहीं किया जा सना, परन्तु इसके छदर का उद्देश बढे ही महान औ

विशिष्ट थे। बाजम-सम्बादा विशास कर हुआ, यह कहता कटिन है। समझत समी भारतीय आचार-वर्शनों के बन्धों में आध्रय-निद्धान्त सम्बन्धी विवेचन उपलब्द हो गाउँ है। छान्दोन्य उपनिषद् के काल तर हमें शीम बायमों का विवेचन उपस्था होता है टम पूर्व तर संन्याम आध्य की विशेष चर्चा मुनाई देनी है। सन्याम और बानवर

गामान्यत्या एवं हो याने शये थे, शिंदन परवर्णी साहित्य में बारी ही आधर्मी वियम और उसके विधि-नियंध के नियम विस्तार से उनकरा हैं। केरिक वरमारा में भागों शाधामें के मध्यन्य में तीन विक्लों की बार्ष संपत्त होनी हैं — है सब्बन्द, ने विकास एवं के बाय। सनु ने इन बारों आधारों में समुद्र का निदान्त स्वीकार किया है। अनके सनुमार अध्येक मनुष्य की हमग चारों ही आया का अनुनरण काना काहिए । दूसरे मन के अनुनार बायकों की दम अवस्था में रिक ही गरता है, अवीत् महुन्य देण्छानुमार इतमें से हिमी एक आध्य की ग्रहेण व

मदना है। बाद के निद्धान्त के अनुसार गृहस्थान्त्रप ही एक मात्र बारतदिक आध्य भीर अरर अल्यम अरेलाइन उसरी कम भूत्म बाँउ है । आध्यम-ध्यवस्था के सन्दर्भ दिस्मा निक्षान्त यह सामना है कि बदावर्ष बाधम के परवान गृहाय, बानप्राण प सभ्यात से ने १६-ी की आवस की बहुत दिया का नवता है। जातातीपतिपर्दे अन्यार्थ शक्त ने इस अन का रामवंत किया है । उनके अनुनार कर भी वैशाप उन्न

[ि]स्नून विदेवन के जिए देनिए-पर्यायक का बुन्हान, प्रवस भाग, पूर्व रे 21,

हो बाय सभी प्रवस्था बहुण कर लेना चाहिए । बाव निढान्त को मानने बाटे गौडम एव बोपायन हैं। इस मिढान्त के अनुसार बृहस्यालय ही सर्वोत्करट हैं। इस मत के कुछ विचारकों ने वात्रप्रस्थ एव सन्यान को कछियुग में वर्ज्य मान लिया है। र

वैदिक परम्परा में आध्यत-सिद्धान्त धीवन को चार भागों में विभानित कर जनमें से प्रत्येक साप में एक-एक जाव्या के जनुसार चीवन व्याचीत करने ना निर्देश देता है। प्रयम भाग में बहुत्यते, हुनरे में गृहत्व, तीवरे में वानक्षस और धीचे में सन्वास-आध्यम प्रकृत करना चाहिए।

लैन-परप्यरा और आवध-तिद्वाला—व्यवण-परप्यराजों में आधु के लाधार पर याथमों के विभावन वा विद्वालय जनकर नहीं होता । यदि हम वैदिक-विवादायारा को दृष्टि के मुल्तासम्ब विवाद विद्वालय जनकर नहीं होता । यदि हम वैदिक-विवाद प्रायम की दृष्टि के मन्यर्थ में दिवन विद्यालय हो स्वाद के स्वाद के सिंदर के विद्यालय हो स्वाद वेदी हैं। जनके मनुगार हम्यात-व्याप्य ही सर्वोष्ण है और व्यक्ति मने जब भी देवाय जरपन हो जाये वसी वंध करण कर तेना माहिए । जनवा मन जावालोगिनपद और पंकर के लिक तिपर है धियाल-परप्यासों में हम्यात्म का माहिए प्रायम का प्रायम के लिक पर्याप्त के लिक विद्यालय नहीं होता। चीहिक विद्यालय के लिकिक विद्यालय के लिक किया व्यवस्थ नहीं होता। चीहिक वीदन के विद्यालय के लिक किया व्यवस्थ नहीं होता। चीहिक वीदन के विद्यालय के लिक विद्

ययिए पदनों जिनावारी ने हिन्तु वर्ष वी इत लायन व्यवस्था हो मीर-पं सीना नर जिया और उहे जैन-ररमार के अनुकर नताने ना प्रसात किया। साथार्य जिननेन ने आरिट्राण में बह सीनार किया है कि हहा पर्य, महत्त्व, सन्तरस्थ और मिन्नु ये नारों आध्य देनायां के अनुवार उत्तरोत्तर जुदि के परिधादक हैं। वै जैन परम्पा में ये चारों आध्य स्त्रीकृत रहे हैं। बहुत्यायंत्रण को मैक्ति जीवन नी दित्ता-नात के रूप में तथा मृह्यायंत्रण को मृह्य-वर्ष के रूप में पूर्व नातरस्थ आध्यत ने बहुप में प्रमित्त के लिक्ट परिचारित या वणमृत्य प्रतिमा की सामग के रूप में अपना मानारिक-नीरित के रूप में स्त्रीहर ति मान विवार है। ये वात्रस्थ ही प्रमान आध्य सी अरमा प्रीतिक-नीरित के स्त्रीहर है ही। इस अरार चारों ही सामम जैन-परमार में भी

१. जाबाजोपनियद् ३।१ १. आश्चिराण १९४१५२

२. देलिए-बर्धशस्त्र का इतिहास, पु॰ २६७

न्तीपृत्त है। बोद्ध-नरम्यम् बोर वैन-नरम्परा दोनो में बापम-निवास के समर्थने समान दुन्दिकोण ही स्वीकृत कहा है।

बौद्ध-बरम्बरः और बायम निदान्त-भीद-बरमारा भी जैर-बरमारा है। वृत्तिः के समान हो बाजम-निजान के नगरमें में विकाल हैं। निजाल को न्योकार बाती है। तमके अनुमार सम्याम-आध्यय (स्वयम-श्रीपन) ही मर्शोचन है और गाँवन बर घी वैशाय भावता में मुक्त हो जाये. उसे प्रयत्ना बहुत कर केली काहिए ! कीय-मान्सा में भी ब्रह्ममर्थांचय निराय-पाल के क्या में, गृहस्थानम गृहस्य-धर्म के स्था में, बातराय

सायम श्रामणेर के लग में और संस्थान साथम श्रमण-श्रीतन के अन में स्वीरण है। र्जन, बोड और वैदिक परम्पराजी का माध्यम-विचार निम्न ताणिका में स्पट हैं:---

बीडनगमरा बैदिक-गरम्परा वैत-परम्परा য়িখন-শল १ बदावर्याचम গিংগে-কলে बृह्ज्य-पर्म त्हरय-धर्म

२. गृहस्याधम श्रामगेर दीशा ३. दानप्रस्वाधम प्रतिमायका गहरूव शीवन

ZŽŽ

शामाधिकवारिक **हेदोपस्थापनीय य**र्गादन ४. संश्वामाश्रम

<u>जनमन्दर्श</u> सामान्यतः आणम-मिद्धान्त का निर्देश यही है कि अनुश्व अमनाः मैतिक एवं

आध्यात्मिक प्रगति करता हुमा तथा वामनामय जीवन के अपर विश्वय प्राप्त करता हता मोदा के सर्वोचन साम्य की प्राप्त कर संदे !

गौता में स्वयमें

मीता जर यह बहुती है कि स्वर्ग का चालन करने हुए धरना मो पीयस्टर है, क्लोकि एएटमें मयाबह हैं, को हुमारे जामने यह प्रतन आका है कि स्त स्वयमं और परमार्थ मा कार्य स्वरा है ? बार्ट बैविक्शन की ट्रिट से स्वयमं में होना हो नराम है हो हमें यह जाने केना होगा कि यह स्वयमं क्या है।

यदि गीता के दिप्टकोण से विचार किया जाय हो यह स्पष्ट हो जाता है कि गीता के अतमार स्वधर्म का अर्थ व्यक्ति के वर्णाध्यम के क्लब्यों के परिपालन से हैं। गीता के दूनरे सम्याय में ही यह स्वष्ट कर दिया गया है कि स्ववर्म व्यक्ति का वर्ण-वर्म है। कोकमाम्य तिलक स्ववर्ध का अर्थ वर्षात्रम पर्म ही करते हैं । ये लिखते हैं कि ''श्वधमें बहु व्यवसाय है कि जो स्मृतिकारों की चातुर्वर्थ-व्यवस्था के अनुभार प्रत्येक मनुष्य के लिए उसके स्वमाद के आचार पर नियत कर दिया यदा है, स्वधर्म का अर्थ मीक्षधर्म मही है। गीता के बढारहवें अञ्चाय में यह बात अधिक स्पष्ट कर दी गई है कि प्रत्येक वर्ण के स्वभाविक कर्नव्य क्या है। विशेषा यह मानती है कि व्यक्ति के वर्ण का निर्धारण उसकी प्रकृति, गुण या स्वमाय के आधार पर होता है " और उस स्वभाव के अनमार उसके लिए भूछ कर्तन्यों का निर्धारण कर दिया बचा है, जिसका परिपालन करना उसका नैविक नर्तव्य है। इस प्रकार गीवा व्यक्ति के स्वमाद या गुण के आघार पर कर्तव्यो का निर्वेश करती है। उन कर्नव्यों का परिपालन करना ही व्यक्ति का स्वधर्म है। गीता का मह निश्चित अभिमत है कि व्यक्ति अपने स्वसमें मा अपने स्वभाव के आधार पर नि सुत स्ववर्तम्य ना परिपालन करते हुए सिद्धि या मुक्ति प्राप्त कर लेवा है। गीता कहती है कि व्यक्ति अपने स्वामाधिक बर्तव्यों में छनकर उन स्वक्रमों के हारा ही उस परमवस्य की उपासना करता हुआ सिद्धि प्राप्त करता है। इस प्रकार गीता व्यक्ति के स्वस्थान के आधार वर करांच्य करने का निर्देश करती है। समाज में व्यक्ति के स्वस्थान का निर्धारण उसके अपने स्वभाव (गण, कर्य) के आधार पर हो होता है। वैपश्तिक स्वमानों का वर्धीकरण और तदनवार कर्तव्यों का आरोपण गीता में किस प्रकार किया गया है इसकी व्यवस्था वर्ण-धर्म के प्रसंग में की गई है।

१. गीता, ३।३%

२. शीता रहस्य, पू॰ ६७३

३ गोता १८१४१-४८ ५. वही, १८१४५

४. वही, ४।१३

जैनयमं से स्वयसं

जैन-दर्शन में भी स्वस्थान के अनुगार कर्मन्य करने का निर्देश है। प्रिनिभण्यत्व में प्रतिन्त्रमण की ज्ञारण करते हुण वर्तामण बया है कि चिर साथक प्रभारनर रहस्तन के कर्मन्यों ने चुन होकर पर स्थान ने वर्तना तेवा है के चिर साथक प्रभारनर रहस्ता के कर्मन्यों ने चुन होकर पर स्थान ने कर्मन्यों तर हिन्दा हो जाना ही प्रतिक्रम (तृत स्वस्थान के आंवरण को छोड़कर रहस्थान के कर्मन्यों तर हिन्दा हो जाना ही प्रतिक्रम (तृत स्वस्थान के कर्मन्य के कर्मन्य का साथ हो जाना हो प्रतिक्रम करना पाय है कि साथक को स्वस्थान के कर्मन्य के कर्मन्य का आवश्य हो है करक्षान के कर्मन्य का आवश्य हो है कर कर्माम के कर्मन्य का आवश्य हो है कर कर्मन्य के कर्मन्य का आवश्य स्वस्थान के कर्मन्य का स्थावरण क्षेत्रहरू एवं नियम्ब है। इतके विपरीय स्वस्थान के कर्मन्य का अवस्थान का स्थावर कर स्वस्थान के कर्मन्य का स्थावर कर स्थावर का स्थावर कर स्थावर कर स्थावर का स्थावर कर स्थावर क

या साधना के अन्य स्तरो में वह किसका परिवालन कर सकता है। स्वस्यति की निरमय करने के बाद ही उस स्थान के निरिष्ट कर्तव्यों के अनुसार नैतिक आपर करें । दरावैकालिक सूत्र में कहा है कि भागक अपने बल, पराक्रम, श्रद्धा एवं बारोप को अन्त्री प्रकार देखमाल कर तथा देश और काल का सम्यक परिज्ञान कर तरंतु वर कर्तव्य पर्य में अपने की नियोजित करें। व बृहत्कल्पभाष्य पीठिका के उपरोक्त रचेंह के संदर्भ में टिप्पणी करते हुए उपाध्याय अमरमुनिजी कहते हैं, प्रत्येरु जीवन-शैत्र में स्वन्धान का बड़ा महत्त्व है, स्वस्थान में जो गुवरत है वह परस्थान में नहीं। अन में मगर जिनना बलवाली है, बमा उतना स्थल में भी है ? वहीं । यदाप स्वस्थान के वर्तव्य के परिपालन का निदान्त जैन और शीता के आधार-दर्गन में समान रूप है स्वीरार हुआ है, लेकिन दोनों में मोडा अन्तर भी है—सीता बीर जैन-सर्रान इस बार्ड में सो एक मत है कि व्यक्ति के स्वस्थान का निश्वय उसकी प्रकृति अधीन गुण और क्षमता वे आधार पर करना चाहिए, लेकिन बीता इनके आधार पर ध्यानि के सामाजिक स्थान का निर्धारण कर उस सामाजिक स्थान के कर्वक्यों के परिपालन की निरंश करनी है, जबकि जैन-धर्म यह बताता है व्यक्ति को साधना के उक्ततम से निम्न तर विभिन्त स्तरों में हिस स्थान पर रहकर उम स्थान के लिए निस्थित आचरण के नियमो का परिपालन करना थाहिए। स्वस्थान और परस्थान का विचार यह कहती है

रे. उद्पृत जैनधर्म का धाण, पृ० १४२ २. बृहद्घ्यमाध्य गीठिमा १२१ १. दम्मवैशक्ति ८१३५ ४, शीजमर आरधी मार्च १९६५, पृ० १०

आचरण के नियमों का परियालन करना चाहिए ।

हि मात्रता के विभिन्त स्वरों में से किसो स्थात पर रक्कर उस स्थान के तिश्वित

सुसना—र्जन विभारण, में स्वस्थान और परस्थान का विचार शाधना के स्परो भी दृष्टि में किया जाता है, खबकि गीता में रवस्थान और परस्थान था स्वधर्म और परधर्म का विचार सामाजिक कर्तव्यों की दृष्टि ने किया गया है। जैन-साधना की इंग्टि प्रमुख रूप से वैयनितक है, जबकि गीता की दृष्टि प्रमुख रूप से माधानिक, यत्तपि दोनो विनारधाराएँ दूसरे पक्षों की निवान्त अवहेलना भी नहीं करती । इय सम्बन्ध में जैन-विचारणा यह बहती है कि सामान्य गृहम्य सायक, विशिष्ट गृहत्व गावक-सामान्य श्रमण अथवा जिनकन्यी कारण के अववा साचना-काल की सामान्य देशा के मधवा विशेष परिस्थितियों के उल्पन्त होने की दशा के बाचरण के आदर्श क्या है ? मा आचरण के नियम क्या है और गीता समाज के बायुग, धविय वैश्य और गृह इन चारों बणों के कर्नेश्य का निर्देश करती है। गीता आध्यम-श्वतस्या की स्त्रीकार ती करती है, फिर भी अत्येक आध्यम के दिशीय कर्तन्य क्या है, हमका ममुश्रित विवेचन गीता में उपलब्द नहीं होता । जैन परम्परा में आध्यम धर्म के क्र्तंकों का हो विदीय विवेचन उपलब्ध होता है। उससे वर्ण-ध्यवस्था को गुण, वर्म के आधार पर स्वीकार किया हो गया है, किर भी बाद्याण के विशेष वर्गम्यों के निर्देश के अतिरिक्त अभ्य वर्णों के कर्तव्यो का कोई विवेचन विस्तार में उपलब्ध नहीं होता । वस्तृप गीला की दृष्टि प्रमुखतः प्रवृत्ति प्रयान होने से उसमे वर्ष-व्यवस्था पर जोर दिया गया है जबकि भैन एवं बौद्ध दृष्टि प्रमुखतः निवृत्तिपरक हीने से उनमें निवृत्यात्मक हम पर आश्रम धर्मों की विवेचना ही हुई है। जन्मना वर्ण-ज्यवस्था का दो जैनो और बौद्धों ने विरोध किया ही था, अत. अपनी निवृत्तिपरक दिन्ट के अनुकूल मात्र बाह्यण-वर्ण के क्रवंबरी का निर्देश करके सतीय माना ।

१. उपासकदशायसूत्र, १११२

नहीं देते हैं कि तुब नारता से दिशान के हिमा किंदु पर निषक्त हो रहें हो. साता ने राज मार्ग नर दिना करना पर माने हो। नान्य इस बार पर जोत देते हैं कि नारता ने सोन में दिना करना पर तुब कहें हो जन करना के जानेशों के गिलागा में दिनों मनई निज्ञात का जानक हो। के हिप्स प्रमास बस्त बाती है है और नार्

क ताक मार्गन कारत पर तुम कह हो यह त्यार के कांगों के गीताराज में विकास मनके निरुगात में आपने कहें। में विकास मार्ग बाती है कि विकास के दोन में यह बार मार्गाक सहण को नहीं है कि पातक दिलानी करोर सामना कर रहा है, बन्तू मार्गाक सहण कर बना का है कि बहु मो कुल कर रहा है जाने दिलतों सामगार को निल्हा है। यदि एक लाजू में सारग की उपनाय भूतिना में दिलतों सामगार को मार्ग करों मोर्ग के प्रति नाक नहीं है, दिल्लामा नहीं है, सिलामा नहीं है, ही बहु यम नृहत्य मार्गक को मोरात ओ सारग की जिला मूसिना में निश्

नहीं हैं. तो बहु उम मृहस्य सायह की मरोतां, जो सामान की दिला मूर्विका में निय होने हुए भी जाने स्थान के बार्वों के प्रति निर्धावन् हैं. आवकर है और ईमातां हैं, तीसा हो हैं। विक्रिक संस्थात हम बात पर निर्मार नहीं करती हैं जैतिक मोरास में सीत बहीं पर साम हैं पर सूच का पर पर निर्मार करी हम हमातां के कांच्यों के प्रति रिकास निर्धायन है। आचारोमपूत्र में स्थार नहां है हि सायक निर्मार मिन माराम सा मदा में सामाना वस पर समिनिष्कास करें उनका आमानिकामांड

भीता हमी बान को अप्यन्त सारीए में इन प्रकार प्रस्तुन करती है कि हवनादी एवं स्वन्धमान के प्रिकृत ऐसे मुमाबितन कमीत होनेवाने जा पर्यम में, हवनव्यार के अनुकृत निनास्त्रीय होने हुए भी स्वधां बंदर है। प्रध्यं अपान अपान स्वाधान स्वाधान एवं समाताने में मिलूक आवारण नवंब ही प्रयाद होता है और इनितर स्वधां का परिपालन करते हुए मृत्यु का याच कर तेना भी करपालपारी है।

हवयमं का आज्यारिमक मर्थ-चीताकार निष्कर्ण अप में यह बहुना है कि है पार्च, तू सब धर्मों का परित्याग कर मेरी धरण में आ, मैं तुझे सब पारों स मुक्त कर हैंगा

आपाराग, १११११३१२०
 मीठा, १३३५
 मध्याग, १११११३१२०
 मध्याग, १९४४, १८४४,

सुनावरित बहुने का जालमें मही है कि जो महर से देशने रह करने तर हुए अविद् होता दिखाई देता है, मधीर कुछा, जीस नहीं है। हुएस ने सालनाओं के प्रवर अमंदित के होन पर मी बीती सामु धापु-जीवन की बाहा क्रियाओं का टोक रूप है आवरण करता है, कभी-कभी हो यह करने साथु को जरेगा भी दिसाने के रूप में उनका मिर्फ करने कर में पालन करता है, जिस्न उत्तवा यह आवरण मात्र बाह्य दिशास होगा है जयमें सार मही होता। क्यों अकार सुगमानदित पर्यम्य में सुमावरण मात्र दिखान सा शेंग होता है। सुमावरित या मुनमुंदित का मही माद्र मही कर्ष है। दो हमारे सामने एक समस्या पुनः अवस्थित होती है कि श्रव धर्मों के परित्याय की धारणा का क्यार्थ के परिवासन की धारणा से कैंगे प्रेस बैटावा आय ? यदि विकार पूर्व देखें हो यहाँ वीतावाद की दृष्टि में जिन समस्त समी का परिस्थान इप्ट है, वे विधि निर्पेश कर सामाजिक सर्मेका तथा बाह्याचरण रूप बर्मावर्स के नियम हैं । बासूतः कराय के रोज में कभी-बभी ऐसा वश्तर उपस्थित हो जाता है कि वहाँ पर्म-वर्म का निर्णय या स्त्रवर्ण क्षीर परवर्ण का निर्णय करने में मनुष्य अपने की मनमर्च पाता है। प्रान वर्षान्यत होता है कि यदि व्यक्ति खपने स्वार्म या वरवर्ष का निरवय नहीं कर पाता ती बह क्या करे ? शीतावार रुपन्ड कप से बहुता है कि ऐसी अनिस्वय की अवस्या में धर्म-अधर्म के विचार से कपर उठकर अपने-आपकी अगवान के सम्मूल नाग और निरंतर नव में प्रस्तुत कर देना चाहिए और उसकी इच्छा का यन्त्र करकर या भाव निर्मित्त बनकर आवर्ध करना चाहिए । यहाँ गीता राष्ट्र ही आस्म-समर्थण पर कीर देती है। लेक्नि जैन-दृष्टि को किनी ऐसे कुपा करने बाले ससार के नियन्ता र्देश्वर पर विश्वास नहीं करनी, इस वर्गव्यावर्तस्य या स्वधमं और परवर्ष के अनिव्यय की अवस्था में ध्यक्ति को यही लुगाव देती है कि उसे राय-देव के भाषों से पूर होकर चपरियद वर्त्रभ्य का आवरण करना चाहिए । बस्तुतः 📰 बस्त्रेक के माध्यम से गीतागार मचने स्वथम के शहल की बात गहता है, परवारवा के प्रति सच्या समर्पण परवर्ग का स्थान और स्वयम का प्रहण ही है, बर्गेकि हमारा शस्त्रविक स्वरूप राग द्वेप में रहित बदस्या है और उने बहुण करना शब्दे आध्यात्मिक स्वथम ना प्रहुण है ।

कप्ट्रा- स्वयं जोर पएमं का वह आवहारिक कर्यवा-व्य निर्फ्ड तामना की तिर्धिन महे हैं, व्यक्ति को समें उपर उठमा होता है। विधि-मियं के इस व्यक्त होता में विधि-मियं के इस व्यक्त हार मार्च में दर्जमों का वार्च प्रकारण है जो आवहत को कर्या-दिवृत्ता में वार्च है। है। वार्च मोता में वार्च में विधि-मियं के साथ मियं मियं मार्च विषेचक के प्रचान होता विधान की हिन मुख्य वार्च है। विधान की अपना की अपना के साथ वार्च में वार्च में वार्च में वार्च में वार्च में वार्च मार्च होता हो। वार्च में वार्च में वार्च मियं हों के वार्च मियं में वार्च में वार्च मियं में वार्च में वार्च में वार्च मियं में वार्च में वार्च में वार्च में वार्च मियं में वार्च में वार्

कारें हैं या उपने बारण उपनक औ हैं. बंबारिक मुख गर्न हैं. हमांच्यासर है । क्षित्रक में कार्त क्यानार्थित से परिवास करता ही स्थापन है । कार्त है। है। भैड, भौड भीर तीना का समाव होत हर्मात के अनुमार करते हुए हैं कि वस्तार भी उपना का रहणात है है । अनी के कुछ पर करते हैं । अनी के कुछ पर करते हैं मही है, कोहि बेमारिक मुक्तार करते नहीं है पर ने कारण कि कारहि है से सिन्ने ्षा के कार प्रमाणक प्रशासन का स्वास्त्र के कारण स्थापन का का स्थापन की कि का स्थापन की कि का स्थापन की कि का स विकास की की की स्थापन की की की की स्थापन की की की स्थापन की स्थापन की स्थापन की स्थापन की स्थापन की स्थापन की ात के त्यापार का भाग करता की कराम लग्न की क्यापार आया । विक से सिंग करता है। विकासिंग कि से सामित से सा ही नहीं है और या नाम्या के निर्माण महार परमा है है नहीं है आप या नाम्या के निर्माण महार परमा है है नहीं है आप ही है नहीं है आप ही है कारविष्य वैद्याचित्र वर्ष वा वश्यार्थ हैं, वादि वश्योगी हैं है वैद्याबार पार्थ हैं स्वापार विक्रम चैराम तक है किए हात, बेंच, क्षेत्र कर्मण, भी गृह महिला के प्रमाण कार्य, कार्य कार्य हराम है। अवस्था के अनुवार वाता के प्रमाण केंद्र व वस्था के अनुवार वाता के प्रमाण कार्य अर्थ के है कि साव-सर्वत कार्यात कार्यात विषय में किया में कारण भी वर्षण में का वाका में का वाका में का वर्षण में का व्याच रामन्त्रेय मोहारि में देवन बैमानिक दशा (परमार्ग) का बहुण का नार्मार के निम्मानिक परामार्थ के निम्मानिक पर मद है, बरोडि बहु उनके पत्रन का या बबन का धार्म है।

माणार्थ कुरसम्बद्ध का भीर पास्त्रों की विदेश सम्मान्य माभित नग ने बण्ण करते हुँए बहुते हुँ - 'बो जीव स्वतीय मूण वर्षाव कर तरवहरू साम करण सामक - प हिंच के हैं। जारे ही वहनार्थ-पूत्र प्रधाय कर नाम होगा, बचन कार कार के हैं। वहनार्थ-पूत्र में हमनाय या स्वार्थ में निवत अलो के को जोड बुक्क जा कर्म-करेती के रिवा है सबीन पर-पास व स्थाप का स्थाप है। पर राज्येत मादि माद करके. एक पर तथ्या के भाषा से स्व-स्वाप की बिहारी की रहा है, तरे पर-ममय वा प्रथम में दिवति जानी । राव, है न और बीह का पियत । े हैं होता है, अहा यह परस्वमाव या परनाई हो है। आचार्य आने नहीं व देश हो जा वह अस्वतात वा वस्त्वा हा है। बाबाव का अस्ति हे हि वस्ताव के स्वित हो है। बाबाव का अस्ति है हम होहर वस्तावें, वस्त्वावा वा वस्तावव के स्वित हमें विश्वम है और मह दूसरे के तीय बाबम में होने की बाबस्य विश्वमालिंग बाबस निर्म

भीता का दुब्दिकोश-प्यापि भीता के स्लोकों में स्वपनं और परपनं के बाद्यालिक अर्थ हो इस विवेदमा का कामक है जेटिन आवार्य पाइस में कीता भाव्य में अपनी हुम्मुक्त से निन्ती हुँ स्वपर्ध और परका की ब्यावन शकर न बाता माध्य म था। का तक कामण की कार्र परका की ब्यावना मस्तुत की है। सहर कहाँ से हैं 'हैं' के अपने कार पर पर पर का कारमा ससुत का है। घर रहर के किया मान्य की महीत राजनेद का अनुगरण कर छो अपने काम में नियोगित करके े तर तरवर्ष का परिवास का अपूर्व कर तम् अपन काम म निवासक कर अध्याप भी भागक और परमा का अपूर्व कर तम् अपन काम म निवासक कर अध्याप भी भागक के अध्याप का अपूर्व कर तम् अपूर्व कर तम् अपूर्व कर तम् हरणा का प्राचित का अपना का अपूर्णिय होता है सवावू सामान कर कर्मिक है और रामन्त्रेय के वसीयून होता ही परावर्ष है और रामन्त्रेय स विवृद्ध होता है। ै. मगपनार, २७३

देरने का स्वस्थान और उसके कर्तव्य का श्रिद्धानत तथा स्वयर्थ—आरठीय पराम्या के स्वाधान के सामान ही पावनाराज पराम्या में बेठके में 'स्वस्थान और उसके तर्था जा सामान होता है के के कहा है कि हुन उस सामान प्राप्त में के के के प्राप्त में के कि है में उसका मान प्राप्त में प्राप्त करने हैं जब हम सम्प्र प्राप्त को पान करने हैं जब हम स्वप्त स्थान जोर कर्तव्यां नहीं एक समानक्ष्मी सार्या के का में प्राप्त करने हैं जिस के ने अपनी प्रीप्त पुरस्त एपिकक रहतीन में इस सम्प्रम में अपनेत प्रस्त कर मात्र प्राप्त में अपनेत कर सार्या है अरहत कर रहे हैं। बेठके के उस्तृत्व कर सार्या के सार्या में स्वस्त का सार्या है। अपनी क्षित के प्रसुष्त सार्या कर के उसके वर्णा है को इसके के स्वस्त कर सार्या के अपने में अपने स्वस्त का निर्माण पर अवने वर्णा का स्वस्त में रहे के अपने क्षा का सार्या है, यद्यीप यह प्यान में रहना सार्या के अपने में अपने स्वस्त का निर्माण एवं अवने वर्ण का स्वस्त सार्या है के अपने क्षा कर सार्या है, यद्यीप यह प्यान में रहना सार्या है कि इसका के अपनेत सार्या है। है। ही जसने भी करर दला होगा।

थ सामाजिक नैतिकता के केन्द्रीय तत्त्र : अहिंसा, अनाग्रह और अपरिग्रह

वैवन्तित एव गामाजित गमना के विवादन के दो कारण हैं—गृह भीह और हुग शीम । भीह (आगर्षित) विवतन वह गृह कान्योत्तिक कारण है जो राग, हैंग, की मान, मारा, कोम (नृत्या) आदि के न्य में प्रस्ट होता है। हिगा, तीयग, तिरसार व

क्षण्याय—ये शोम के कारण हैं जो अन्तर मानग को चीहत बरते हैं। यहाँ में कीर शोम ऐसे तात्व नदी हैं जो एक-दूगरे से अनग और अनगावित हो, तयापि में के कारण आन्दरिक और उनका प्रश्चन बाह है, जददि शोम के कारण बाह हैं में बताका प्रश्चन आन्दरिक हैं। मोह चैबितक बुदाई है, जो वापाय-जीवन में हुर्ग करती है, जबति 'बोम' गामाजिक बुदाई है, जो वेबितिक चीवन को दूरित करती हैं

मोह का केन्द्रीय तत्त्व आमनित (शह या तृष्या) है, व्यक्ति तोम का केन्द्रीत वंग हिता है। इस प्रकार वैत-आवार के सम्प्रक् चारिक की दृष्टि के अहिता और अन्तर्गति में से केन्द्रीय सिद्धान्त है। एक बाह्य जन्त्र प्रसामितक जीवन से समय का सर्भ पन करता है तो दूसरा जैतनिक या अन्तर्गतिक समय को बनारे करता है वैसारिक में

वैचारिक आमानित है और एकान्य वैचारिक हिमा । अनासन्ति का तिद्वान्त ही अर्दित से गामिनन हो मामाजिक जीवन में अपरिषद्ध का आरेस अरुनुत करता है। कार्य वैचारिक जीवन के साम्प्रमें में आमानित और सामाजिक जीवन के साम्प्रमें में हिंग है। इस इसर देन-पार्टन गामाजिक नैतिनता ने तीन केम्प्रीय मिद्धान्य प्रस्तुत करता है । । अहिंगा, रे. समाग्रह (वैचारिक महिज्जुला) और ३. अपरिषद्ध (अमाह्य)। अब एक बनारे न्हिक के

में महिमा और अनामक्ति मिलकर अनाग्रह या अनेकान्तवाद की जन्म देने हैं। आपर्

् काहता, र. सनावह (बंबारिक गहिन्तुवा) और ३. अपरिवह (समबह)।

अन एक दूनरी दृष्टिन के विकाद करें। यनुष्य के बास वन, वाणी और सर्रेर ऐसे सेन नापन हैं, निकले साध्यम से बहु करवावरण या दुरावरण से प्रवृत्त होता है। सर्रोर का दुरावरण दिना और सराववरण व्यक्तिग कहा जाता है। वाणी का दुरावरण आयह (वैचारिक सर्वाहृण्या) और सराववरण अनावह (वैचारिक सहिन्तुवा) है। अर्थिक में स्वाहृण्या के और सराववरण अनावह (वैचारिक सहिन्तुवा) है।

रातर वे पुरिवरण हिंता और बरावरण बहिता नहा जाता है। बादों का दुरावरण आपर (वैजादिन काहिपूरण) में और नदावरण अनावह (वैजादिन हिपूरणा) हैं। बर्धिक का दुरावरण मार्गाल (सम्हत) और गदावरण अनातित होत्रारण) हैं। वेंगे दिह महिता को ही नेप्टील तरब माना जार तो मनेकान्त को चैनादिक महिता की मनामित को मार्गिक बहिता (त्वरण) नहा जा नकता है। साथ हो सनामित मैं प्रतिकारित होने बाला अपरिषद् वर निकारित सामानिक एउँ शाविक बहिसा वहा का सन्दा है।

याँ गायना के तीन अंध-नम्बन्दर्शन, सम्बन्धान और सम्बन्धारिय के स्वाव-हारिक पत्ती की दिव्ह से विचार दिया जाय हो। जनामस्ति सम्यादर्शन का, अने रान्त (मनापर) सम्बन्धान का कोश अहिंगा सम्बक् चारित्र का प्रतिनिधित्र करते हैं। दर्शन का गन्दरूप कति में हैं, जान का सम्बन्ध विचार से हैं और चारित्र का वर्ष से है। बड़: बुनि में बनायरित, दिचार में अनायह और आपरण में ग्रहिंगा यही जैन बाबार दर्गन के रम्मदर का क्यावहारिक स्वच्य है। जिन्हें हम सामाजिक के रान्दर्भ में ब्रमरा अपरिषद् अनेवान्त (अनायह) और बहिसा वे नाम से बानने हैं । अहिसा, अनेकान्त्र और अपरिचंद्र जब सामाजिक जीवन से नाम्बन्धिन होते हैं, तब वे राज्यक् बावरम के ही अंग कहें जाने हैं । दूतरे, अब बावरण से हवाग शासर्य कार्यिक, शांविक भौर मानियक दीनों प्रशाद के कमी के हो, को अहिता, अनेकान्त और अपश्यित का ममानेच सम्बन्धावरण में हो जाता है। सम्बन्ध आवरण एक प्रकार से ओवन शुद्धि का प्रशाम है, अब नातिमुद्ध कभी की गुद्धि के विष् अनामस्ति (अपपिष्ठ्), शाविक कमों ना गुढ़ि के निए अनेशन्त (अनावत्) और शायिक नमीं की शुद्धि के निए अहिना के पालन का निर्देश किया गया है। इस प्रकार अने जीवन-दर्शन का सार हुन्हीं श्रीन मिडान्तो में निहित्त है। जैनवर्ष की परिभाषा करने बाला यह बलोक सर्वाधिक प्रचलित ही है---

स्याडादो वनंतेर्जस्मन् पक्षगातो न विद्यते । नास्त्यन्यं पीड्नं किवित् जैनधर्मः स उच्यते ॥

सम्मा भैन पहीं है जो पतारात (गयरब) मे रहित है, बनायहों और अहिनक है। यहाँ हुए हैं इस मानद में बी स्थाट कर ने बात केता चाहिए कि विस्त समार सामा या चेदना के तो पता का साम प्राचन केता के तहा का स्वाद केता के दिल्ला में पहने हुंचा ही रिशा में दूक इसें में अन्तान नहीं रहते हैं, उड़ी बसार बहिता, अनावह (अनेसान) और अमिता के प्राचन के स्थाप है कि साम नहीं रहते हैं के साम नहीं रहते हैं, विश्व के स्थाप के स्थाप में एक इसे में साम नहीं रहते हैं के साम नहीं रहते थे से हम के साम साम निकास होते था है।

वहिंसा

जैनधर्म में बहिसा का स्थान

महिमा जैन माथार-दर्शन का प्राण है। महिमा वह पूरी है जिस पर समग्र जैन माथार-विशि पूमरी है। जैनाममों में ऑहमा को भगवती कहा गया है। असनध्याकरणु मुत्र में कहा गया है कि मयभीतों को जैसे घरण, बहिसों को जैसे गयन, तुपितों े जल, मुनों को बीरे मोबन, शमुद्र के सब्द तैये जनान, दीनियों की जैसे भीता भीत बन में जैने मार्वशह का मान जासास्त्र हैं, कैने ही अहिमा प्राणिमें के लिए अल्पान्त्र है। सहिसा चर सुद अचर सभी प्राणियों का वांचाय करने बाणी है। है वर्गाणी यमें हैं, जिसका उपरेण सीर्यंडक करते हैं व आपारीयगृष से बढ़ा गया है — सूत, प्र^राग और बनेमान के गमी बहुन यह उपरेश करते हैं कि दिशी भी प्राण, दूर, बीर होर मत्य की किसी प्रकार का धरिताय, जड़ेन या युक्त मही देना काहिए, म किमी का इस्त करना चाहिए। यही शुद्ध, नित्य और शारपण पर्म है। समाण लोज की नीता की बानकर सहसी ने इसका बनियारन किया है। विवह नागम के अनुसार ताली हैने का मार सह है कि विभी भी आली वी हिनान करे। अस्मिस ही समय पर्से वाना है, इसे गरेव रमरण रशना चाहिए। व समर्थनान्तिमूल में कहा गया है कि गरी प्राणियों ने हिन साथन में अहिंगा के गर्निय्द होने ने बताबीर ने इनकी प्रया दिया है। में अहिंगा के समान हुगरा वर्ष नहीं है। "

भाषार्यं अमृत्वरहगूरि के अनुसार क्षेत्र जैन जाबार-विधि का सम्पूर्ण शेन वर्षि ते आएत है, उसने बाहर उसमें बुछ है ही नहीं। सभी नैतिक नियम और मंगीती इसके अन्तर्गत हैं; आकार-नियमों के दूसरे कर जैसे अनन्य भारण नहीं करना, कोरी नहीं करना सादि तो जनसाधारण को गुरुत करने समझाने के निये भिन्न-निग्न नार्य से बहे जाते हैं, बन्तुत वे सभी महिंगा के ही विधिन्त पत्र हैं। जैत-दर्शन में महिंग वह जापार वावन है जिसमें जाबार के सभी नियम निर्गरित होने हैं। भगतनी आएँ यना में कहा गया है—बहिसा यव बायकों वा हुदब है, सब बाक्तों का गर्म (इन्हीं ह्यान) है ।

बीदयमें में ऑह्सा का स्थान-बीद-दर्शन के दश शीलों में अहिमा ना स्वतं प्रयम है। बतु कठन में नहां है कि तथायत ने संक्षेत्र में केवल 'सहिमा' इन मतारों में की का वर्णन किया है ^६ बुद्ध ने हिमा को सनार्थ क्ये वहा है । में वहने हैं, जो प्राप्ति की हिंगा करता है, वह बार्य नहीं होता, सभी शांचियों के अति अहिंगा का पाल करने बाला ही आर्य नहा बाता है।

बुद्ध हिंसा एव युद्ध के नीतिशास्त्र के बीर विशेषी है। बामपद में वहां गया है-वित्रय से और अल्बन्त होता हैं। पराजित दुन्ही होता है। जो जय-वरात्रय को हो

१. प्रस्तब्याकरणसूत्र, २:१।२१।२२

व. मुत्रकृताम, शाक्षाकृ ५. मक्तपरिका, ९१

७. मगवती-आराधना ७९०

धम्भपद, २७०

२ व्याचाराग, राष्ट्राहाहरः ४. दशबैद्धालिक, ६।९

६. पुरुषार्वसिद्ध्युषाय, ४?

८. चत्रातक, २९८

चुका है, उमे ही सुम्न है, उमे ही शान्ति है ।

यपुनर्रनित्रम में यह वाद और अधिक स्टाप्ट कर दी गयी है। हिंतक व्यक्ति लागू में गारांगि जीवन का और अधिक सिंतक स्ववित्त स्वाधिय जीवन का मुक्त करता है। वे कहने है—"मित्रु में, गीन क्यों से पुनत माने एंचा होता है जैंगे काकर नरक में बात दिया गया हो। और ने तोन ' इस्ते प्राणी हिंद्या करता है, दूबरे प्राणी का हिंद्या की और स्मीटा है और प्राणी-हिंगा का सम्बंत करता है। भित्रु माँ, तोन पत्ती है पुन्त प्राणी देशा हो तोता है, हैये काकर नक्ष में मान स्वया हो। "

"निमुन्नों, तीन धर्मों से युक्त प्राणी ऐसा होता है, जैसे साकर स्वर्ग में बाल दिया

मया हो। कीन से तीन ?"

"म्बर्भ प्राची हिंता से बिरत रहता हैं, तुनरे को प्राची-हिंता की ओर नहीं पैनीटता और प्राची-हिंता का सम्बन नहीं करता 1³⁷ बौड्यपर्व के प्रहारान सम्प्रदान में करना और मैत्री की भावना का जो परम उस्कर्त देवा वाता है, उतकी पृष्टभूनि में यहाँ पहिला का निकासन रहा है।

दिग्ध में कोहता का स्थान—गीता में कहिंसा का महत्य स्वोइत करते हुए वर्ष मणवान का हो मान कहा गया है। अहे देवी सम्प्रता पर्य खालिक वर मी महा है।' महामारत में दो मेंन निवाराला के स्वामन हो। कहिंसा में सभी बची को सम्बद्ध मान विया गया है।' यहा नहीं, उनमें कने के उपरेश का उद्देश भी प्राणियों को हिंसा के दिल करणा है। अहिंसा ही धर्म का सार है। महाआरतकार का कमने हैं कि— 'मानियों को हिंसा ने हो, स्नविय मर्ग का उपरेश दिला गया है, जब मो अहिंसा है एस है स्है। या है।

सिरित यह प्रश्न हो मश्ता है कि गीता में बार-बार बर्जुन को यूद्ध करने के लिए गृहा गा, उनका मुद्ध में जराय होने का वार्ज निकरतीय हवा कायराहार्ज गाना गया है, दिर गीता को अहिंग की वासक केंद्रा जाता बार ? हस सम्बन्ध में गीता के मानवागारों की सुंद्ध नोजों की मामस केता आवश्य हैं। आयर टीमाकार आयार्थ पीडर 'मुप्पबर (पूड कर)' यहर को टीका में निकार हैं—वहाँ (उन्तुंनक करन को पूड की चर्ज्याता का निजान नहीं है। 'है हतता हो नहीं, आयार्थ आत्मोपमंत्र वर्ष के के मामार पर गीता में जहिंग के निजान की गुष्ट करने हैं—विके मुझे मुख पिय है सेंड हो मानी प्राणियों को मुख्य कनुकृत है और जीते पुज्य मुखे अपिन या प्रतिकृत

रै. धम्मपर, २०१ रे. अंगुत्तरतिकाय, ३।१५३

१. गीवा १०१५-७, १६१२, १०११४

Y. महामारत, वान्ति पर्व, २४५।१९

५. वही, १०९:१२

६. योवा (ग्रांकर माप्य), रा१८

है, जैसे बी तब प्राणियों को सारिया चाहितून है, बन चड़ार को नाम प्राणियों में स्वी साराव हो गुण और दुलारों गुण आप से समूचन और चाहित देनता है स्थिते भी प्राणिता सामस्य नगी करता चारी अहिताब है। इस बकार का महितक हैंग पूर्ण जात में निपत्र हैं, बह सब योगियों में परस अनुरूप सारा अनार है।

महान्यां गोपी भी गीचा को जरियां का प्रतिशादन बरण मानते हैं। प्रशास्त्री है—'गीना की सूक्त सिता हिंता नहीं जरिता है। हिंगा विशा कीय, बार्गान हो गुणा के नहीं होती और योगा हमें नन्द, नज़न् और तबन् बुणों के प्रम में गुणा, होते मादि सवस्तामी में उतार प्रदर्भ की करती है। इदिन वर दिना की नागर्यह की हैं गरतो है)। वाक स्थाप्त सन् भी नीता को अहिया का अविधारत सन्ध माने हैं। में तिमते हैं-- हिम्म अर्जुन को बुद करने का प्रशासी देता है. तो इगरा अर्च री नहीं कि बह मुख की वैयश का नगर्नन कर रहा है । यह ती एक ऐसा अहमर ही पड़ा है; बिगड़ी उपयोग गुढ़ प्रम भारता ही और संदेत करने के निए करता है जि भावता ने साथ गढ कार्य, जिनमें युद्ध भी सम्मिनित है, हिसे जाने चाहिए। यह रिपी मि अहिंगा का प्रका नहीं है, अरिंगु अवने उन विश्वों के विवह हिंगा के प्रयोग का प्रत है, जो अब राषु बन नये हैं। इस ने प्रति उनकी हिनक साध्यारियक विकास स्रा पुण की प्रधानना का परिणाम नहीं है, अधिनुक्षत्रात और कागना की उपने हैं। मर्जुन द्रम बान को स्वीवार करना है दि वह दुवँलना और बज्ञान के वागिपून ही गरा है। गीता हमारे नम्मूल जो जादर्श उपस्थित करती है, बह अहिंगा का है, और गई बात सातवें अध्याय में मन, वचन और कमें की पूर्ण दशा के और बारहरें अध्यान में मनत की मनीदरात के वर्णन से स्पष्ट हो जाती है। इत्य अर्जुन को झावेग 🖽 दुर्मानत के बिना, शाम बा हेंप के दिना युद्ध करने को कहता है और यदि हम अपने अने की ऐमी स्पिति में छे जा सकें, शो हिंगा अनस्मव हो आशी है।

इस प्रकार राष्ट्र है गीता हिया की सबसंक सही है। बास अप्याय ने प्रतिकार के लिए अटेपनुविद्युर्वक विवादका में हिमा बरने वा जो समर्थन गीता में रिमार्ट गार्गी है, उससे यह नहीं कहा जा बरना कि सीता हिया की अवर्षक है। अपनार के ब्राव हिमा की समर्थन निषम नहीं बन बाता। ऐसा समर्थन तो हमें जैन और बीड आपरों में भी उपनक्ष्य ही अपना है।

स्रोहता का सायार—व्यक्तिया वी भावना के भूत्रपार के सम्बन्ध में दिवारों में हुए भान्त चारणाओं को प्रयस मिला है, अब. उस पर सम्यक्कीण विचार कर देना सावस्यक हैं । मेर्नेन्टी ने अपने सम्य हिन्दुएविषक' से इस भ्रान्त विचारणा को प्रशुर्ग

रै. गीता, ६१३२ २. दि मगबद्गीता एवड चेंत्रिंग वर्ष्य, पू० १२२ ३. भगबद्गीता (रा०), पू० ७४-७६ ४. हिन्द एपिशा, मेरेन्त्री

निया है कि हिता को अवशारणा का विशास अब के आभार पर हुआ है। वे किसती है— असम्म मनुष्य जोव के विक्रियन वर्षों को यद को दृष्टि छे देखते थे और अब की पद धारणा ही आहिए। का मुक्त हैं।' लेकिन कोई भी अबुट विचारक मेन्द्रेस्ती मी इस धारणा है तहत्वन नहीं होगा।

शाचाराय में बहिसा के सिद्धान्त की मनोवैज्ञानिक आधार पर स्वापित करने का प्रयास किया गया है। असमें अहिंसा को आईत प्रवचन का सार और युद्ध एव शास्त्रत धर्म बनाया गया है । सर्वप्रधम हमें यह विचार करना है कि अहिमा को ही धर्म क्यों माना जाय ? सूचकार इसका बडा अनीवैज्ञानिक उत्तर प्रस्तुत करता है; यह कहता है कि सभी प्राणियों में जिजीविया प्रधान हैं, पुन समी की मुख अनुकूल और दु:ल प्रति-कुल है। शहिमा का अधिच्छान यही मनोबैझानिक सन्य है। बारतस्य और युल की चाह प्राणीय स्वभाव है, जैन विचारकों ने इसी यनीवैज्ञानिक त्यव के आघार पर अहिंसा को स्थापित किया है। अहिना ना आधार 'अय' मानना गलत है नवोकि भय के सिद्धान्त की यदि अहिंसा का आधार बनाया जायेगा तो व्यक्ति केवल सवल की हिंसा से बिरत होगा, निर्वल की हिंसा से नही । जिसने भव होगा उसी 🖨 प्रति शहिसक बुद्धि बनेगी । कबिक जैनपमें तो सभी प्राणियों के प्रति यहाँ तक कि बनरपति, जन भीर पृथ्वीकायिक श्रीवों के प्रति भी अहिंगक होने की बात कहता है, अत. अहिंगा की मय के आघार पर नहीं अपिन जिजीविया और सनावाका के मनोवैज्ञातिक सहयों के भागर प्रर अधिष्टित किया जा नकता है। युना जैनधर्य ने इन मनीवैज्ञातिक मत्यों के साय ही अहिमा को तुल्पता बीप का बीदिक आधार भी दिया गया है। वहाँ कहा गमा है कि जो अपनी भीडा की जान पाता है वही तुत्यता बीच के आधार पर दूसरों की पीडा को भी समझ नकता है। व प्राणीय पीडा की तत्वता के बोप के आपार पर होने वाला आत्मसंबेदन ही बहिंगा की नीव है 5

बरुषुत: ब्राहिवा का मूनाबार जीवन के प्रति नम्मान, समस्वभावना, एव छड़ीत-मानता है। समस्वमान ने बहानुमूर्ण छाध अहैतमान के छान्योच्या उदरूजन होती है मेरे रहीं से श्रीहम का विकास होता है। वहिंसा औवन के प्रति भय से गही, जीवन के प्रति सम्मान हो विकासत होती है। ब्यावैनाज्यित्मुम में बहा चया है कि सभी प्राणी नीनित रहना भारते हैं, बोई मस्ता नहीं चाहता सन्त निकंप्य प्राण्य र हिंसा) मा निपंत करने हैं। महत्तु मानियों के नीवित एन्ते का नीवित विकास र ही सहिंसा में महत्त्व है। असतुत स्वीवन के जीवन एन सामान हो सहिंसा है। उद्याप-प्यवनमूत्र में नामत के स्वापाद एवं सहिंसा के निकासत्त को क्याना वरते हुए महा प्या

१. अग्रतस्य जाणइ मे बहिया जाणई एवं तुःलगन्तींम, १११।७

२. सम्बे पाणा पिकाउया मुहमाया दुःमपरिकृत्वा, १।२।३ ३. दसवैहालिक

है कि सब और बैर में मुद्दा साथक, जीवन के प्रति येम रमने बाने मानी प्राणियों में सर्वन प्राप्ता का स्वामान जान कर उनकी कामी भी हिमान करें। मह मिन्नी में है पाराना का कि जहिंगा गव पर विनिष्ठ है, मानोट उसर है। वासायकों में तो आसंगेयता नो भावना के जायार पर हो मोहूमा-पिडानन में प्रतिखातन भी गयी है। उसमें निया है—जो लोन (अय्य जीव समूह) का आगाव करता है वह स्व अपनी आगामा का भी अपयान करता है। में साथे कुमेशम्मीयता की भावना की स्व पुष्ट करने हुए महामोर नहने हैं—जिये हु साराना चाहता है, यह नू हो है। कि दू प्राप्तित करता चाहता है कह नू हो है। जिस नू परिवार देना चाहता है, यह नू है है। में सदरियोजों में भी निया है—जिया भी सम्य प्राप्ती नी हरना कहता समारी है हरा है जोर अस्य की में क्या हमानी हो दश है। इस क्या समुद्र समरी है

धीडममें में लॉहसा का साधार—परवान बुद्ध ने भी ऑहना के साधार के दा में हमी 'आरवादा सर्वकृतेपु' की भावना को बहुण किया है। मुतनिवात में दुर्ज पूरे हैं—'जेवा में है बेसे हो से सब प्राणी हैं, और जैने में सब प्राणी हैं बैसा ही में हैं— हम प्रकार अरने बाना सब प्राणियों को समयकर न स्वयं दिसी का वप करें मौर न दूसरों से कराए।'"

गोता में ब्रह्मिन के सावार—गोतानार भी सहिता के सिदात के सागर के कर हैं 'सारावर' गर्ममुंगु' को उद्यान भावना को लेकर चन्दा है। यदि हम गीता को मीठ सार मी मन्दर्ग का तो साहिता के सागर को दूचिन और स्वास्त को सहिवार में यह सम्मन्द है कि जहाँ जैन परम्प्या में नमी सारायां को साहिवक समेव के आगार दि सहिता की प्रतिकात नी महें है। सही सहिवार में साहिवक समेव के आगार दि सहिता की सम्मन्द नी महें है। सही सहिवार में साहिवक समेव के आगार दि सहिता की सम्मन्द नी महें है। साद की मीता, व्यावन के अनिवाद का स्वास्त सहिता की सम्मन्द का स्वास की स्वास की स्वास की स्वास की स्वास्त की स्वास्त की सहिता की सामायां और समेद मी सामादिक सहिता सा आग्रीकात की जनूर्य हिता सहिता की सामायां कर हिता का विचाद एक सम्मन्दान हम सामादिक सामायां के स्वास की सामायां प्रति होता का सम्मन्द के हम सामादिक की सामायां की स्वास की स्वास की सामायां स्वास हम सामादिक सामायां के स्वति सभी नहीं। खता सामायवन सुद्दिक हा दिवार है। सहिता का सम्मन्द है।

रै. उत्तराध्यान, ६१७

र, बही, क्षप्राप्

५ मुक्तिराज, शाश्राहरू

रे. बाचारांग, १।३।३ ४. अस्टपरिशा−९३

६. दर्धन और निन्तन, सच्छ २, पूर १^{२५}

जैनागमों मे बहिसा की व्यापकता

वेन-विचारणा में ब्राहिता वा शेव विजना स्थापक है, हतवा बोध हुने प्रस्तम्यारस्थाप थे हो तराजा है। जनमें ब्राहिता के साठ वर्धायवाची सात वर्णित हैं—हैं
लिवांच, र. दिवृत्ति, र. समाधि, प. धार्थित, प. वर्धात, ए. प्रम्त, ८.
वैध्यन, प. दुवान, १०. शृचित, ११. स्था, १२. विद्यात, ११. सम्बद्ध, ११. व्यात, १०. व्यात, १०. विद्यात, ११. सम्बद्ध, १२. व्यात, १८. विद्यात, १४. सम्बद्ध, ११. विद्यात, १४. सम्बद्ध, ११. सम्बद्ध, १४. सम्बद्ध, १५. सम्बद्ध, १४. सम्बद्ध, १५. सम्बद्ध,

प प्रकार क्षेत्र आवार-पर्यंत में बहिला छाड़ एक व्यापक पूर्वित को सेकर उपस्थित होंगा है। उसके ममुखार सभी छर्गुण करिंद्वा में निर्दित है और बहिंद्या है। एनमात्र स्पूर्त है। बहिंद्या सर्वृत्य-काबूह की सूचक है। सिंदिसाक्या है?

हिंता वा प्रतिषम क्षांत्रिम है। " यह बहिता वो एक निवेतास्तर परिमाण है। कैंगि हिंता वा प्रताम क्षांत्र अधिन हैं समय भी केंगि हिंता वा प्रताम क्षांत्र अहिता कहिंदी की निवेतास्तर बहिता की पति हो किंगि किंगि केंगि केंगि

१. प्रदम्भाकरणसूत्र, १।२१

माप्ता ही दिया है भीन सम्माद बरिनाइ है । एकार बम्मा दि इसे है और अपूमा पामी सरिएक हैं है। याचा की परान हता है। हो अपनत है और अपनत हाए परिए की जनगण है।

हराई एवं माद महिला-वर्णना को सन्दर्भ कर से अनुसारे हे दिना पारे पर देगी रेमा बारपाद है कि चॅर विकास्ता के बनुतार रिमा कार है ? और विमानमा रिमा स की गार्थों में दिवान करनी है। एक दिशा का बाधा गुन्त है किये के गारियांगिक क्यापनो से इस्त दिना क्या गता है। इस दिना बनून तुने बाता पाना है। वी त्य किया है विशे प्रायशिक्षण, याणकर, याणकरूक शाहि मानों में आया जाती है। र्जन विचारका आप्ता की नहींन क्या वे दिए बादती है । चन दिना ने हारा दिना हमन होता है बड़ आत्मा नहीं, बरम बाल है-पाल जैतिक सरित है । प्रेत विचल्या में प्राप्त पार माने नामे हैं । याँच इतियाँ की सहित, बन, काची ओर सरीर का किए। बन, बरमन द्विता एवं ब्राहुण से वस बन्त हैं । इस बान परित में का विधोतीकान है

इन्त-नृष्टि से हिना है ।" बह दिया की यह परिधाना उपके बाबा वस पर बड़ देनी है। हरा-हिमा वह सामार्थ प्राप्त-वारिश्यो का कुरात, हता नवा दिवनाक करमा है है भाव-दिना दिना का दिवार है यह बावनिक धरन्ता है, जो प्रमाणित है। आवार्य अमुच्छाह हिमा के बारशायक क्या पर बच दे। हुए हिमा-सहिमा की गरिनाम करते हैं। उनका क्या है कि बानादि बयायों का क्याद महिना है और प्रतथा उनान होता ही दिना है। बड़ी जैन-भागभी की दिवार पुन्टि का मान है। दिना की पूर्ण परिभागा तत्वाचेनुत्र में मिलनी हैं। नत्वाचेनुत्र के सन्तरत तत्व, हेंप मार्डि प्रवार्डी ने

क्षत होतर किया जाने बाजा प्राण-क्य हिंगा है 12 हिंसा के प्रकार

भैन विकारकांने इस्य और भाव इन दी वर्णके आधार पर हिंगाके बार विमाग किमे हैं—है भाव बारोरिक हिंगा, २ माव वैवारिक हिंगा, ३, बारोरिक एड देवारिक हिंसा, और ४. बाव्टिक हिमा । मात्र बारोदिक हिमा या डब्य हिमा वह है जिममें हिंगक क्रिया तो सम्प्रत्न हुई हा, लेकिन हिंगक विवाद का अमाव हो। उदाहरणस्वरूप, सावधानीपूर्वक चलते हुए भी दृष्टिदोष या अन्तु की मुदमता के कारण उनके नही दिलाई देने पर हिंगा हो जाना । सात्र वैधारिक हिंसा या भाव हिंगा वह है बिगमें हिंसा की किया तो अनुपश्चित हो, लेकिन हिंगा का सहस्य उपस्थित हो। इनमें क्वी हिंसा के सकत्य से मुक्त होता है, लेकिन बाह्य परिन्यितिया उसे क्रियान्विन करने में सफल नहीं हो पाता है, जैने कैदी का न्यामाचीश की हरया करने का विचार (अन

रं. ओपनिर्युक्ति, ७९४



कर्ती को उस हिमा के शति उत्तरदायों नहीं मानाजा सरता है व्योकि उसके भन में उप हिंगा का कोई सकरप हो नहीं है। अब. ऐसी हिंगा हिंगा नहीं है। हिंगा की उन स्थितियों में, जिनमें दिना की बाती हो या दिना करनी पहती हो, हिंगा वा संस्थ या इराप्ता अवश्य होता है, यह बात अलग है कि तुरु अवस्था में हम बिना रिनी पीर स्थितिगत दशाय के स्वतत्र रूप में हिंसा का संचन्य करते हैं और दूसरे में हमें दिवाग में सकत्य करना होता है। किर भी पहली अधिक निकृष्ट कोटि की है बरोंकि आरम मारमक है।

हिमा के विभिन्न रूप-रिवक वर्म की उपयुक्त तीन अवस्थाओं में यदि हिमा है जाने की तीसरी अवस्था को छोड़ दिया जाये तो हमारे ममझ हिंगा के दो रूप वर्ष हैं— १ हिंसा को गयी हो और २. हिंसा करनी पड़ी हो। वे दशाएँ जिनमें हिंस करनी पड़नी है, दो प्रकार की हैं—१ रसणास्त्रक और २. खाबीविकाश्मक, इसमें दो बार्त मन्मिलित है---जीवन जोने के साधनों का अर्जन और उनका उपभोग b

जैन दर्शन में इसी आमार पर हिंसा के चार रूप माने यमें हैं-

शंकरपत्रा (शंकरपी हिंसा)—धरुत्य या दिचारपूर्वक हिंगा करता। यह

आक्रमण्डमक हिंसा है। २, विरोधकार-स्वयं और दूसरे छोगों के जीवन एव स्वरवों (अधिकारों) के ^{इसरी}

में लिए विवशताम्य हिंसा करना । यह मुरक्षात्मक हिंसा है । उद्योगमा—आजीविका उपार्जन सर्वात् उद्योग एव स्वयसाय के निमित्त होते.

बानी हिसा। यह उपार्जनारमक हिसा है।

४ भारम्मता-श्रीवत-तिर्वाह के निधिल होने बानी हिंसा-वैसे भोजत मी पकाना । यह निर्वाहारमक हिसा है ।

हिंसा के कारण वैत भाषायों ने हिंसा के चार कारण माने हैं। १. राय, २. डॉव, १. क्याम

अर्थात् कीय, अहंकार, कपट एवं सीअवित और ४ प्रमाद । हिसा के साधन

जहाँ तक दिसा के मूल साधनों का प्रक्त है, वे तीन है-मन, वचन और शरीर ! सभी प्रकार को दिसा इन्ही बीन साधनों द्वारा होनी या की खाती है।

हिंसा और बहिंसा मनोदशा पर निर्भर

जैन दिवारधारा के अनुसार न केवल पृथ्वी, पानी, वायु, अस्ति एवं बतस्पति अगन् ही जीवनमूनत है, बरन् समझ सोक सूरम जीवो से ब्याल्य है। अधः प्रश्न होता है

१. अभियान राजेन्द्र, सण्ड ७, वृ= १२३१

हि क्या ऐसी रियति में कोई पूर्व कहिनक हो सकता है ? महासारत में भी नगर् को सूत्व बोती से स्वारत सामकर पही प्रस्त उद्याद है। बात में बहुने बोत है, पूर्वी पर उद्याद ही। बात में बहुने बोत है, पूर्वी पर उद्याद हों है को दूर को सी मुद्रा नहीं है को दस्ते में सिया में भी महूत नहीं है को दस्ते में सिया में सिया महूत नहीं है को दस्ते में सिया में को महूत महिता है। के दिवस में महूत महिता में सिया में में सिया में सिया में सिया में सिया में सिया में में सिया में सिया

प्राचीन पुग हे हो वैन-विचारकों को दुव्हि भी देश प्रका की और है। आवार्ष प्रसाह इस मन्त्रमें से जैन दुव्हिभोच को प्रण्य करने हुए जिलने है—विकारकारी निवेदनर प्रमादा का चलन है कि अमेकालेक जीव-पानुहों है परिवारक दिवस में गायक का महिंगद का नदर में प्रत्यारन विनुद्धि को दुव्हि से ही है, बाह्य हिंशा मा अहिंगा की दुव्हि के सही हैं। जैन-विचारपारा के जनुगार भी बाह्य हिंगा हो पूर्णवर्षा वरू पाना हमान नहीं।

हिंगा और बहिमा का प्रस्वय बाह्य घटनाओं पर उतना निर्भेश नहीं है जितना वह **रापक की मनोदशा पर आपान्ति है।** हिमा और बहिसा के विवेक का आघार प्रमुख क्य से बान्दरिक है। हिमा में अकत्य की प्रमत्त्वता है। भगवती सुत्र में एक मवाद के हारा इसे राष्ट्र किया गया है। मनवर गीतम महाबीर से प्रक्त करते हैं-हे भगवन. किमी ध्रमणीयासक में किसी जस प्राणी का बध न करने की प्रतिका की हो, लेकिन पृथ्वीराय की हिना की प्रतिज्ञा नहीं ग्रहण की हो, बदि भूमि स्रोदने हुए उसमें किसी माणी का क्य हो जाय तो क्या उसकी प्रतिका भग हुई ? महावीर कहते हैं कि यह मानना चित्रत नहीं -- उसकी प्रतिका भंग नहीं हुई । इस प्रकार सकल्प की उप-स्पिति बपवा सापक की भागसिक व्यिति ही हिंसा-विहिता के विचार में प्रमुख तस्व है। गरवर्ती जैन साहित्य में यही चारणा पृथ्ट होती रही है। आवार्य महबाह का कथन 🧗 कि सावधानी पूर्वक जलने बाले मासू के वैद के नीचे भी कभी-कभी कीट, पतंग आदि सुद्र प्राणी जा जाते हैं और दब कर घर भी आने है. छे दिन उदन हिमा के निमित्त में उसे मूदम कर्म बम भी नहीं बताया गया है, क्योंकि यह अन्तर में सर्वतीमावेन उस हिंसा व्यापार से निलिप्त होने के कारण निष्याप हैं । जो विवेक सम्पन्न अप्रमत्त सायक शान्तरिक विगुद्धि से मुक्त है और बानमविधि के अनुसार शाचरण करता है, उसके द्वारा हो जाने वाली हिंसा भी कर्म-निजंश वा कारण हैं"। छेनिन जो व्यक्ति प्रमत्त है "

१. महाभारत, शान्ति पर्व १५।२५-३६ १. भगवतीमूत्र, ७।१।६-७

२. ओपनिर्युनित, १९०० ४. ओपनिर्युनित ७

५, आधिनियुनित, ७५%



मही करता) तो जलटे रोप का भागी बनता है? यदि बीजा में वर्षित सुद्ध के अवसर को एक समाजासक मिर्माल के रूप में देशें हो। माम्यत्व विनन्त्रियारणा गीता हे वर्षिक इर रही रह जाती है। बोगों हो ऐसी स्थित में व्यक्ति के वित्त-साम्य (कृतगीमित) बीर परिपत मामसमाल (मीताण) वर वल देती है।

बोर तारलत सारवाल (शांताक) पर वल देती है।

बहिंगा के बाह्य राय की बबहेलना उधित गहीं---हिंहा-बहिंहा के हिचार में

पिम भारीररत शान्तरिष्ठ एस एर जेन-आनार्य उत्तार अधिक वल देते रहे है, उसका

क्षेत्र निवसर रूप में सभा को स्वीकार्य है। यही नहीं, इस सन्दर्भ में जैनरर्शन, गीडा
और तीय-यांग में शिवार सामा है, जिल पर हम विचार तर पूर्व है। यह निश्चत है

क्षेत्र हैं। यह निश्चत है

हिंगा-आदिना की विवारा में मावारक या साम्योदिक पहलू हो। मुक केन्द्र है, वैदिन

हैदें बाह्य रूप की शबहुन्ता भी क्यापि सामा नहीं है। यदापि वैवित्यक सामार्ग की

दिन्ह में सामारिक एवं साम्योदिक पत्र का हो यवीकिक मून्द है, विदन्त हाता।

विक एवं स्वायहारिक जीवन वा प्रवत है, हिंगा-अहिंगा की विवयर में बाह्य राष्ट्र की

मैं हिंगाना नहीं जा सक्ता, क्योंक स्वायहारिक जीवन सीर शायविक अयवपा की

दिन्ह में स्वाय पर विचार दिना जा सकता है, वह को आवरण का बाह पत्र ही है।

बरनुत: हिगा-महिसा की विवक्षा में अन-कृष्टि का सार मह है कि हिमा बादे वह बास हो या आन्तरिक, वह बाचार का नियम नहीं हो सकती ।

दूनरे, हिमा-सहिमा को विवशा में बाह्य पत्त की अवहेन्ना भी मात्र करिप अपकाराम्मक अवस्थाओं में हो शस्य है । हिमा का हेनु मानमिक प्रवृक्तियों, कपाये हैं

१. देतिए-रर्गन और जिन्तन, खब्ह २, पु० ४१६ २. सुत्रहुतांन, २।*

में हमारो मान्या निजनो वन्ताला होती और विरोधी में मानवीन पूर्णों का दिवना बहिर प्रश्न होगा, बहिनक निरोत्त की महत्त्वा भी जनती ही अधिक होगी। ^{केन}, बौंड मौर गीता का समात्र शांत

वहीं तक उपोगना और बारमाना हिमा भी बात है, पर गृहस्य उसने नहीं वर महता, क्योंकि वर तह रारीर का योह है, तर तक आजीविका का अर्थन और मारी किह आवरणता की पूर्वि कोतों ही बासस्वह हैं। यदान कम स्वर पर मनुष्य अपने की हम मामिनो को हिमा में दबा महता है। जैन वर्ष में वर्गाय-रूप रूप मामिने पर मास् पीतम के लिए भी यम बोबों की हिमा करने का निर्देश हैं।

ने किन, उस क्यांनि कारेर कोर मार्गान के मोह से ऊपर उठ जाता है तो बहु हुए कारिया की दिया में बीट सामें बढ़ जाता है। जहाँ तक व्यस्त सायक सा सम्बामी से बीत है, वह बार्रावही होता है जो अपने टायोन पर थी। यसव नहीं होता, अब स् मर्थनोजानेन दिना में बिरत होने का बन केता है। वारीन बारण बान के निए हुए स बारों को ठोक्कर बहु महत्त्वार्थक और विस्तानारम बीनों ही परिविधानों में कम बांच हिमा ने किया है। वित निया हती है सहसे में कोई भी कारिए हा ते इत में जोती तर जो तहें ब माना। वह पोले-पोले बाले बाता है। समाना वरा बीर में अदिवा भी वर्ष में हुए हार निर्वासित किसे से वी बम्बलिति वर सामारित है। उन्होंने दिना को संख् मानो से जिनका दिया—(है) संकलास (है) विशेषक की (१) मारका पा मान मान मारका (१) सम्भाव (४) सम्भाव (४ वीरानं है। विशेषा निमा क्यानं का क्ष्मणातक दिया है। वह सबस हैन का जोड़-है, को शोदिक सत्यानों पर भागना आर्थन के प्रियों है। जा छावन व बहु आराध व हिन्दाल के रिकार के प्रतिक सरिवाद रोगों चिहता है। आराधका हिना कार्य हिंदणहर दिया है। उने छोटते में हैं गढ़ शामा कारण है। मारव्यता है। मारव्यता हिंगा कारण है। में हैं की भीतिक मारवी है अर्थ में शाम हारा सामा जेरहन चनाना बाहते हैं।

वयव रहर वर देव आगोर प्राप्त है। वाद आक्रमान वर्षिय आगोर्थ प्राप्त आहि है बगीमून हीहर भी आहे बची and the armose fail has bet and a select and the se केन्द्रवं के निवित्र हैं निवित्र हैं निवित्र हैं निवित्र हैं निवित्र हैं जिन्द्र पर वास्त्रभाग देव कर निविद्र केन्द्रवं ने के केन्द्रिया के निव्य हैं निव्य हैं निव्य हैं निव्य हैं कर्मण कर व व व व्यवस्था पा विश्वस्थ । वर्षा वा, वावदः ववदः वदः व्यवस्थ व्यवस्थ व्यवस्थ व्यवस्थ विश्वस्थ विश्वस् के दिन में बहुत है तेन दिना के भी माना कार्य का दिना है। इस माना कार्य कार्य कर कर कर करी की?

वित्तर के जानका का वहनामां कर करनीमारेन कुने करिया की रिमा में जाने की हेर प्रवार पूर्व करिया है। बहुता प्रधानमा क्षेत्राचारिक भी बही रहता है। कार रवह दिए क्षेत्रान क्षेत्र है। यूर्ण कावाह कारा कारा है। वर्ष क्षेत्र के यूर्ण कार्य E at the safe de As

यद्यपि धरीरफारी रहते हुए पूर्व अहिसा एक आदर्श ही रहेगी, वह प्रपार्थ मही ■¶ पानेगी । जर शरीर के मंदलन का मोह समान्त होगा तमी वह आदर्श समार्थ की मूमि पर भवनरित होया । किए मी एक बात ध्यान में रखनी होयी, यह यह कि अब हर गरीर है और गरीर के सरक्षण की बृत्ति है, चाहे वह मायना के जिल ही क्यों म हो, यह क्यमित सम्मव नहीं है कि व्यक्ति पूर्ण बहिया 🏿 बादर्श को पूर्णकोण माकार पर गरे। दारीर के लिए बाहार बावस्वक है, कोई भी बाहार दिना हिमा के मध्यद नहीं होगा । चाहे हमारा मुनिवर्ग यह बहुता भी हो कि हम औरेशिक बाहार महीं छेने है रिम्तु क्या उनकी बिहार-यात्रा में नाच चलनेवाला पूरा लवाजिमा, रोबा में रहने के नाम पर लगनेवाल कोके औड़ियक नहीं हैं ? जब समाज में राजिमीजन मामान्य हो गया हो, क्या मन्ध्याकाचीन गोकरी में अनीहेशिक बाहार मिल पाना शम्भव है, क्या परमीर में बन्याकुमारी तक और बस्बई से कलकत्ता तक की गारी याकाएँ औहेंशिक माहार के सभाव में निविध्न नरमद हो सकती हैं ? बडा बाईड-प्रवचन की प्रमादना के निए मन्दिरों वा निर्माण, पूजा और प्रतिष्ठा के नवारीह, सम्याजी वा संचानन, वृति-भनों के स्वागद और विदाई समारोह तथा संस्थाओं के अध्वयसन परवाय की नव-वोदिपुरत महिंगा के परिपालन के साथ कोई समित रख सहने हैं ? हमें अपनी अन्तराग्ना है यह गर पूछना होना । हो सक्ता है कि कुछ विरत्न सम्ब और गायस हों जो इन क्मीटियी पर घरे उतरने हों, में बनकी बाद नहीं बहुदा, वे बादच बन्दनीय है, दिन्त सामान्य रियनि क्या है ? किर भिशाचर्या, पाट-विहार, धरीर संवालन, स्वामीस्वाय शिमवे हिंगा नहीं है। पृथ्वी, अपन, बायू, बनस्पनि अदि शमी में बीब है, ऐसा भीई मनुत्य नहीं को इन्हें नहीं बारता हो, पुन: शित्रने ही येने गुश्य प्राप्ती है की इत्हियों में नहीं, अनुमान से बाने बाने हैं, अनुष्य की पनारें के सारवने मात्र से ही बिनके बंधे हुट बारे है अब बीव-हिंगा से बचा नहीं वा नवता । एक ब्रोर पर्जीव-निश्रम की अत्रवारणा और दूसरी और नवकोटियुक्त पूर्ण अहिंदा का आहरी, भीवित रहरर इन दोनों में सद्दि विता वाना समयन है। सता मैन मानामी को भी यह बहुना पहा कि 'अनेवानेक जीव-ममुहों से परिष्याण बिरद में नाबक का अहिनवाद भन्तर में बारमान्विष विराद्धि की दर्शि से ही हैं (बोपनिवृत्ति, ७८३) । नेविन इमका यह अर्थ भी नहीं है कि इस अहिना को अन्यवहार्य मानवर जिलाबान दे देवें । महार एक ग्रारेश्वाधी के नाने यह हवादी विवत्तात है कि इस हका और आब होनी बरेता में पूर्व बहिना के बारतें को प्रशनक नहीं कर क्यारे हैं हिए इस दिएा में ब्रमण क्षामें बढ़ सबते हैं। और बोलब को बुर्गेटा के आब हो बुर्वे कहिंगा के ब्रास्ट की भी प्राप्तर वर गरते हैं। यम के यम हिलाओ दिला में आदे बारे हुए शावत के निए बोबन का बन्तिम शय बनार ही देता है, बन वह पूर्व बहिता के बनाई वो बाबार बर करता है। बेशबर्द की फर्नरवर्तक बन्दावरी में बहें हो रहेन

संयारा एवं भौडहर्वे अभौगी नेवली गुणस्थान की सदस्याएँ ऐसी है जिनमें पूर्ण बहिमा

का आदर्ग साकार हो जाता है। पूर्ण कहिसा सामाजिक सन्दर्भ में

पुत्र. अहिंसा की सम्भावता पर हमें न केवल वैयन्तिक दृष्टि से विचार करना है सपितु सामाजिक दृष्टि से भी विचार करता है। चाहे यह सम्मव भी हो, ध्यक्ति गरीर, सम्पत्ति, सम्बद्धीर समाज से निरपेश होकर पूर्ण सहिमा के आर्र्म की उपलम्प कर सकता है, किर भी ऐसी निरपेदावा विन्ही विरल नायकों के लिए ही सम्भव होगी, सर्व सामाग्य के लिए थी सञ्चव नहीं कही का सकती है। अतः मूल प्रश्न यह है डि क्या सामाजिक जीवन पूर्ण अहिंसा के आदर्श पर कड़ा किया जा सकता है ? क्या पूर्व अहिंसक समाज की रचना सम्भव है ? इस प्रश्न का उत्तर देने के पूर्व मैं आपने समाज रचना के स्वरूप पर कुछ बातें बहुना चाहुँगा । एक तो यह कि अहिनक चेतना अभीत् संवेदनशीलता के अमाव में समाज की करपना ही सम्भव नहीं है। समाज जब भी सरी होता है आरमीयता, प्रेम कोर सहयोग के आयार पर लडा होता है अर्थीन अहिंसा के माधार पर सड़ा होता है। क्योंकि हिसा का अर्थ है-चुना, विदेव, आकामकता, बोर कहाँ भी में वृत्तियाँ बलवती होगी सामाजिकता की आवना ही समाप्त ही जावेगी, समाज वह जावेगा । अतः समाज कीर अहिता सहयानी हैं । दूसरे यादों में यदि हैं मनुष्य को एक सामाजिक बाणी मानने हैं तो हमें यह मानना होगा कि महिमा उपके लिए स्वामाधिक ही है। अब भी नोई सवास लढ़ा होना और दिनेगा दी वह अहिंगी की जिति पर ही कवा होगा और टिनेगा। किंतु एक दूसरा वहलू भी है, वह मह कि समाज के लिए भी अपने अस्तित्व और अपने सहस्त्री के हित्ती के सरशण का प्रश्न मुख्य है और कहाँ मिशिश की सुरक्षा और हिनों के सरकार का प्रकार है, यही दिना कारित हार्य है। हिंधों में दक्शव स्वाभाविक है, अनेक सार ठो एक का हिंद दूनरे के महित पर एक पा महिताय दूवरे के निनाश वर साशाहिता है, ऐसी स्थित से समात्र-भीवन में मी हिमा अपरिष्टार्य होगो । पुनः समाज का हिल और सब्दम-व्यक्ति का हिल भी परस्पर विशेष में हो सबसा है। कब मैसनियक और सामाजिक हिलो में संबर्ष की स्थिति हैं। तो बहुजन हिताचे हिमा अपरिहार्य जी हो सबनी हैं। जब समाज या राष्ट्र वा बोर्ट मदम्य या वर्षे अवना दूमरा राष्ट्र अपने हिनों के लिये हिमा पर अवना अन्याय वर दनाज हो बाये थी निक्षय ही बहिंगा की दुनाई देने से काम न चलेगा । जब एक मैंने साचार्यो हारा चर्चोवित 'सानव वाति गृह: है' वी बल्पना शकार नहीं हो पानी, बर एक रूपूर्ण मानक समाय प्रमानशारी के साथ अहिंश के बासन के लिए प्रतिकार नहीं होता, तब तक अहिमक समाय की बात बजता क्योशकरमाना ही बहुत आयेगा। जैनामय विम पूर्ण संहिता के बादर्श की प्रत्युत करते हैं सलसे भी जब साथ की या सप के हिंडी लराय की मुत्रसा या क्याय का प्रत्य साया हो हिंसा को स्वीदार करता पड़ा 1 नपापि र्रीत मेरन जीन बामार्य भारत के प्रराष्ट्रत्य इतके प्रकास है । वही मही, हिटां पर्युप दे हो दर्र दय वर्रवार वय जिला यहा है कि यह यो मुख्या के किए कृति था दिना बा बराग ने नवना है। नेहे ब्रवले के बर्नेहिश ना नश करूप को दिया भी प्रतिप्र मार भी भरी है। जब जब मान्य यस्त्र का खुब की सरवब पार्यावड प्रवृत्तिकों से सामा रमना है यह शोवना कार्य हो है कि सामुदाविक क्षेत्रव में पूर्व महिला का मार्च्य बरहार्य वर मदेशा । विशेषकृति में अहिका के अपनादी की सेवर जो कुछ बरा गया है। एके बादे बुध बीच सम्बन्धार के कह में बीचे बाग्द करवा स बादने ही, दिनु बदा क्ष क्नुनक्त मेरी होती कह दिवी बूद तक के मामदे दिनी मुरती तमारी का मधान ही पहर ही जा यह कर करनवार ही बहा ही और वे महिना की पूर्व देते हुए बोन क्टेंब करे नहें ने बचा जलवा कोई क्टीवल महें है ने बड़ बाप बाह हुमताert errit et fe mirer at aur & fer fent mieren & ferg preprien क्रम के अनेय बन्द ऐसी वरिवियांत्रती का करती है जिनमें महिनक संदर्श की द्या में रिल्प हिराम क्रान क्रमानी नहे । यह हिना में आतमा वनरेनामा कोई समास दिशी महित्य त्याव का पूरी माह बिना देवे को अलाद ही कावे, पश बद सहितक गुवाब की अपने अरिमान के रिए जीई श्रीकों अही करना फाहिए है हिमा-सहिना मा प्रान निशा देशीनम प्राम नहीं है ह अब गढ मार्च बारव सवाब एक ताब बहिया की सावमा के िए नगर नहीं होता है, दिश्यों एक सवाब जा शाद हारा बही बानेशाया अहिंगा के मारारे की बात कोई क्षर्य नहीं क्षरी है । लंक्सकान्द्रत बीद मुरसान्द्रत हिंगा तवाब-बीरन के लिए अपोरशर्त है । जबान-बीरन में पूर्व जल्द भी बारना ही दुर्गा । प्रती प्रधार प्रधोन-व्यवनाथ और कृति बन्डी मैं होनेशानी दिवा भी नवाय-वायन में बनी ही रहेंगी । मानव तथाय में मानाशार एवं मुत्रश्य दिना की नवान्त्र करने वो रिचा में मीया ती था सरता है वित्र प्रवदे तिए पृष्टि के शेव में एरं महिवह आहार की प्रपृष्ट बार्गान के सम्बन्ध में श्राप्तक अनुसंबात एवं तकतीती विकास की आश्रासहा होती । बर्गा हमें यह नवल भी केश होता हैंड यह नह बनुष्य की मंदेरवरीनडा को प्रमुखन्त् वृक्ष दिशातम नहीं हिंद्या अल्बेगा और वान्त्रीय आहार वह वान्यिक नहीं प्रशाप आदेवा मनुष्य की बापरादिक प्रकृतियों वह पूरा नियम्बन नहीं होता । अरहमें बहिएक समाब यी म्यना हेनू हमें मधान ने जापराचिक जन्तियों को नवरण करवा होना और आप-गोंपर प्रवृत्तियों के नियमक के लिए हवें मानव बाति में संवेदनशीलडा, संयम एएं विवेश के तत्वों की क्षितित करना शीवा ।

महिमा व निवाल वर कुममानक बुधि से दिवार-वाहिमा के कारते थे जैन, बीद भीर बीटन वरहारणे पाम कर हे हसेशर करती हैं। कैदिन जहीं कह महिमा है पूर्व आरों के आवहारिक केदन में उनहारे को बात है, जीनों है गटनागरें दुर सावारों को दरीकार वर चोका के सारच बीट एकत के निविस्त हो आने बाले धान (हिना) को हिना के रूप में मही मानती है। यमपि इन अपनाशासक स्पितिमें में भी मायक का राम-देन की बृत्तियों से अपन उठ कर अप्रवस्त बेना होना आवश्यक है। इस प्रकार तीनों परम्पराएँ इस सम्बन्ध में भी एकमत हो जाती है कि हिनाश्रदिना में प्रश्न क्या रूप से मानतिष्क हैं; बाहा रूप में हिमा के होने पर भी राम-देव वृत्ति से अपन उठ हुआ अपना मनूष्य अहिमा है, जबकि बाहा रूप में हिमा नहीं होने पर भी प्रथम मनूष्य हिमक है। सीनो परम्पराएँ इस अध्यन्त में भी एकमत है कि मपन-अपने साहसे को आतानुसार आवरण करने पर होने बाको हिसा हिमा नहीं हैं।

श्रतः व्यक्तिमा राम्बन्धी सैद्धानिक मान्यताओं में सभी आचारकों गर्म दूसरे के दुर्गत निकट आ जाते हैं, लेकिन इन साधारों पर यह धान लेना भाति है कि ब्यावहारिक जीवन में अहिमा के प्रस्थय का विकास सभी सामान्यकीने में समान रूप से हुआ है।

अहिंसा के शिखान्त की सार्वजीम स्वीकृति के बावजूद भी अहिंसा के अर्थ की लेकर सब घमों से एक बपता नहीं हैं। हिंगा और अहिंगा के बीच लीची गई भेद रेना गभी में अलग-अलग है। कही परावध को ही नहीं, नरबाल को भी हिंसा की कोटि में महीं माना गया है तो कही बातस्पतिक हिंगा अर्थात् पेड-पीधे की पीडा देना भी हिंग माना जाता है । चाहे श्राहिमा की अवधारवा चन सबसे समानरूप से वपस्थित हैं) विन्तु श्राहिमक चेत्रना का विकास उन सबमें समानकप से नहीं हुआ है । क्या मुसा के Thou shalt not kill के लादेश का वही अर्थ है जो महादीर की 'लब्बेमला न हंतरका' की रिकार का है? प्रचारि हुने यह ब्यान रखना होगा कि अहिना के अर्थविकास की यह यात्रा हिती कालक्रम में न होकर मानव जाति की शायाजिक चेतना तथा मानवीय दिवेठ एव शवेरनगीलका के विकास के परिणामस्यकप हुई है। जो ध्यानिन मा समान व्यायन के प्रति जिनना अधिक संबेदनशील बना उसने महिमा के प्राथय को उनना है। अधिक न्यापक अर्थ प्रदान किया । अहिंसा के अर्थ का यह विस्तार भी सीनी क्यों में हुआ है- एक और महिमा के अर्थ की ब्यापनता दी गई, तो हमरी और महिमा की विचार भरिक गहन होता चला थवा है। एक ओर स्वजाति और स्वधर्मी अनुस्य की हुन्या के निर्पेष से प्रारम होतर बद्बीयनिकास की हिमाके निर्पेश तक इसमें अर्थनिकार बारा है तो दूगरी और प्राणिवयोजन के बाह्य गय से देय, दुर्भोदना और असावयानी (प्रभार) के भाग्योंग्ड रूप तक, इसने गहराईयों में प्रवेश किया है। युन. श्रहिमां ने 'हिना मन करो' के नियेपात्मक अर्थ ने लेडर दया, करवा, दरन, सेवा और ताग्योग के विधायण अर्थ तक भी अपनी यात्रा नी है। इस प्रकार हम देखने है कि अहिंगा की अर्थिकार निकामानी (भी वार्सिस्मनल) है। अन अब भी हम अहिंगा की अवारा मा को तेहर कोई अर्थों करना काहते हैं तो हमें उनके नभी वहतूओ की ओर स्यान देना होराह ।

रे. सर्वेत और विशाल, पुरु ४१०-४११,

जैनाममें के संदर्भ में ब्रहिमा के अर्च को स्वास्ति को केकर कोई वर्चा करने के पूर्व हमें यह देव लेना होगा कि ब्रहिमा को इन अवधारणा ने वहाँ वितन वर्ष पाया है। यहरी, ईसाई और इस्लाम धर्म में ब्रहिसा का अर्थविस्तार

मुमा ने धार्मिक जीवन के लिए जो धम आदेश प्रमारित रिये थे उनमें एक है 'मुम हत्या मत करो किन्तु इम आदेश का अर्थ बहुदी समाज के लिए व्यक्तिगत स्वार्थ 🗷 िए अपनी जातीय मार्द की हिना नहीं करने से अभिक नहीं रहा। वर्ष के नाम पर हो हम स्वयं पिता को अपने पुत्र को बाल देना हुआ देवाने हैं । इस्लाव ने वाहे अस्लाह को 'रहमानुरेंद्रीम'-करणातील वह कर सम्बोधित विचा हो, और बाहे यह भी मान निया हो कि सभी श्रीयवारियों को जीवन उतना ही जिय है, जिसना सुन्हें अपना है, किन्तु सममें अन्लाह की इन करणा का अर्थ स्वयमियों तक ही गीमित रहा। इतर मनुष्यों के प्रति इस्लाम लाज तक सर्वदनशील नहीं बन सना है। पून यहूदी और इस्लाम दोनों ही बभी में धर्म के लाम पर परावित को लामान्य कप से आज तक स्वीकृत किया जाता है। इस प्रकार इस धर्मों में मनुष्य की सर्वदनशीलता स्वजाति और स्वधर्मी मर्थान् अपनो से आंगक अर्थविस्तार नहीं पा सबी है। इस सबैदनशीलता ना अधिक विशाम हमें ईमाई धर्म में दिलाई देशा है। देना शत्रु के प्रति भी वरवाशील होने की बाद महते हैं। वे अहिमा, करणा और सेवा के क्षेत्र में अपने और परावे, स्वधमीं और विन्मी, सन् और मित्र के भेद से उत्तर उठ जाते हैं। इस प्रकार उनकी करणा सम्पूर्ण मानवता के प्रति बरमी है। यह बान अलग है कि मध्ययुग में ईसाइयों ने धर्मके नाम पर मुन की होली सेकी हो और ईश्वर-एक के आदेशों की अवहेकना की हो किन्तु ऐसा हो हम मभी करते हैं। धर्म के लाम पर पत्रुवित की स्वीकृति भी ईमाई धर्म में नहीं देखी जानी है। इन प्रकार समने ऑहमा की अवधारणा अधिक व्यापक बनी है। समकी सबमें बड़ी विशेषता यह है कि उनमें नेवा तथा सहयोग के मुल्तो के माध्यम में अहिंसा को एक पितायक दिशा भी अदान वी है। फिर भी नामान्य औवन में पशुवध और मानाहार के निर्देश की बात बहाँ नहीं चठाई गई है। जल उनकी कहिमा की अनपारणा मानवना तक ही सीमित मानी जा सक्ती हैं, वह भी समस्त प्राणी जगत की पीडा के प्रति सबैदनशील नही बन सका।

भारतीय चिन्तन में अदिसा का अर्थ-विस्तार

લાફે વેરી મેં "તુમાનું પૂતામાં બરિયાલુ વિકારત'. (સાવનેલ, ૬ એર ૧૯) કે રુપ સે શુક દુતરે વેલું દુધ્યા ત્યાં સાત કર્યું માર્ક હો સવવા 'મિત્રાગ્યાદુ વધ્યુપા વર્લોધ મૂળતિ તમાને (ત્યુર્વેન, ૧૬ ૧૯) કે રુપ્ય કે સ્વતાના સો સાનવસાતિ રુપ્ત હો ત્યાં માત્ર વર્ષ તમાના કરે માર્ગ કર્યું છે. કેલું સેવે એ પાર્વ વર્ષિક્ષમ વેલતા લો સાનવસાતિ રુપ્ત હો લીધીલ વર્ષે હું કે માત્ર દ્વારા છે. કોર્યુ, વેરી સે મેંગર્જ પેલ પ્રથમ છે. ત્રિલાં સાનુસ્તાર્ય કે વિલ્લા સે વિલ્લા મેંગ *ત્રી ત્યું, 'વ્યર્કે, તે.''પ્યુર્વેમ્બ્લ્યેલાક્ય પેલું, 'સર્કે લીક્યુલ' ફેલ્યા ત્રે દિલ્લા સે है.' तथादि प्रामिनों को हैरिहरू दामता एवं बाह्यात्मिक विकास के आधार पर हिना-रोग की मोबना बा मिल होती है। एक चल जोन की हिवा करवा हुम मुन्दा तम्मानियां मेनेक जोने भी हिमा करता है। 'एक व्यक्तिमक व्यक्ति है ह्या करने बाला एक प्रमार से अन्य जोगों की हिमा करने बाला होता है।' हम प्रकार मह निज्ञ होना है। रमार जोगों की अपेशा चस जोगों की और चल जोगों में प्येनियम की, प्रेनियमों भी मन्द्र को और मनुष्यों में भी च्यक्ति की हिमा अधिक निकृष्ट है। हमा हो नहीं, मन जोन की हिमा करनेवाले को अनेक जोगों की हिमा का और च्यक्ति की हिमा करनेवाले को अमन्य जोगों की हिमा कर सरिव महत्वालं का अधिक सिक्स के सिक्स के सिक्स के सिक्स हमार ने में हम्म निवेंस विकास है कि हिमा करनेवाले की सिक्स के स्वास्त का अधिक स्वास्त्र के अधिक सहत्वालं गी

जब अपरिहार्य बन गई दो हिमाओं में किसी एक को बुनता अनिवार्य हो हो हुने भाव नेपारहाय कर गड़ का रहात्वा न राज्या एक का चुनता अराज्य प्रस्त अराज्य प्रस्त अराज्य प्रस्त अराज्य देवा अराज्य होगी वह निर्माद देवा अराज्य होगी वह निर्माद देवा काल, गरिरियति आदि अनेक बार्वो पर निर्माद करेवा । यहाँ हमें जीवन की मूल्यस्ता को भी स्रोतना होगा। जीवन को यह यून्यवला दो बातो पर निर्मार करती है— (१) माणी का पेन्टिक एवं साल्यान्तिक विकास स्रोत (२) उसकी सामानिक वर्गोर्ना। सामान्यतमा मनुष्य का जीवन अधिक मृह्यवान है और अनुष्यों में भी एक गन्त का. किन्तु किमी परिस्थिति में किसी सनुष्य की आरेशा किसी पशु का जीवन भी अधिक मुख्यबान हो सबता है । समञ्जतः हिमा-अहिमा के विवेश में जीवन की मृत्यवत्ता की गर विचार हमारी दृष्टि में लोगित ही रहा, वही कारण था कि हम चीटियों के प्रति तो संदेरनगील वन सके किन्तु मनुष्य के प्रति निर्मम ही बने रहे। साज है^{ने} अपनी मंदेदनशीलना की मोडना है और मानवता के प्रति अहिंगा की सकारा मह मनाता है। यह आवश्यक है कि हम अपरिहार्य हिसा को हिमा के रूप में समारी रहें, अन्यया हमारा करना का शोन सूच जारेगा । दिवसना में चाहे हमें दिगा दरनी यरे, किन्तु उसके प्रति आत्मानानि और दिखित के प्रति करना की धारा सूनने नहीं पाचे, अन्यपा वह दिगा हमारे स्वमाय का अन वन अल्बेगी खेल-क्साई बानक में। हिंगा-मोहणा के रिवेश का मुकर आधार माथ गही नहीं है कि हमारा हुएय कपाने हैं मुक्त हो, बिन्तु यह भी है वि हमारी संवेदनशीतता जानूत रहे, हृदय में बमा और करणा नी बारा प्रवादित हाती रहे । हमें अदिया को हृदय-सून्य नहीं कताना है। क्यों वि यदि इयारी संवेदनयोजना जानुत बनी रही सी निरुप्त हो हम जोवन में दिना

हेरे, सनवरीसूच, छाटा१०२. वे वही, शास्त्राह०७.

र. वही, राश्वशर द

की मात्रा को अरंगतम करने हुए पूर्ण अहिंसा के आदर्श को उपलब्ध करेंगे, साथ ही वह हमारी अहिंसा विषायक बनकर भानव समान में सेवा की गया भी यहा सकेगी।

अनाग्रह (बैचारिक सहिष्णुता)

जैन धर्म में अनाग्रह

वैन दर्शन के अनेकातवाद का परिणाम सामाजिक नैतिकता के क्षेत्र में वैचारिक महिण्युदा है। समाप्रह का सिद्धान्त मामाजिक दृष्टि से बैचारिक वहिंमा है। ब्रामाग्रह अपने दिवारों भी तरह दूसरे के विधारों का सम्मान करना विकाता है। वह उस भ्राम्ति का निराकरण करता है कि सस्य मेरे ही पास है, इसरे के पास नहीं हो सकता। यह हमें यह बजाता है कि मत्य हमारे पाम भी हो सकता है और दूगरे के पास भी। सत्य का बीय हमें ही ही सहता है, किन्तु दूमरों की सस्य का बीच नहीं ही सकता-पह कहने का हमें अधिकार नहीं है। सत्य का सूर्य न केवल हमारे घर की अकाशित करता है बरन् दूनरों के घरों को भी प्रकाशित करता है। यस्तृत यह सर्वत्र प्रकाशित है। जो भी जम्मून: दृष्टि से उसे देश पाता है, वह उसे पा जाठा है। सत्य देवल सत्य है, वह न मेरा है भीर न दूसरे का है। जिस प्रकार महिसा का निकान्त कहता है कि जीवन जहाँ कही हो, उसका सम्मान करना चाहिए, उनी प्रकार अनायह का सिद्धान्त कहता है कि सस्य जर्भ भी हो, जमका सम्यान करना चाहिए। जैनाबार्य हरिशत बहने है कि को स्वार्य पृत्ति में कार उठ गया है, जो लंकहित में निरत है जो विश्व स्वस्प सा जाता है और जिमका बरित निर्मल और खडितीय है, वह चाहे बहाा हो, विष्णु हो, हरि हो, शकर हो, मैं प्रमे प्रणाम करता हूँ। मुझे न जिन के बचनों का पत्राबह है और न कपिल आदि के वचनों के प्रति हैंव, मुक्तियुर्ण बचन को भी हो, वह मुत्रो पास है।

मनुदाः पराष्ट्र भी पार्णा शि विचार भा काम होता है। व्यक्ति च सन-गत भी प्रमोग सीर दूसरों भी निगत करता है, तो परिशासनक्य वास्त्रिक मेलन से संवर्ष में में प्रदुर्भार हो जाता है। वैचारिक खायह न वेचन वैचनिक मैतिक दिशास की मुस्कित रुप्पार्टी से पर्दा हो सिंक में दिवह, विचार खीर बैक्तास ने बीज से रिगा है। पुत्रमुदास में नहां गया है कि जो अपने-अपने तब नी प्रशास और दुवरे पत्र भी निजा सर्म में है। अपना पार्टिमय रिजाने हैं जोर सोक नो तस्त्र के परसाने है वे एसन्वरारे स्वरं तारास्क्र में महनने दुले हैं हैं वैचारिक सावस्त्र क्षत्र स्वरं या तम से मन्त्र स्वरं है

१. सोक्टल्व निर्णय ११६७, ३८

२. सर्व सर्व पर्वतंत्रा वरहंता वर्र करी।

चे उ तर्थ विजस्तन्ति सतारे वे विजस्तिया ॥-सूत्रकृतीन १।१।२।२१.

कोर उसने राम-द्रेग को कृति होनो है। आवारत्यभूति में कहा गया है कि प्रचेत 'बार' राम-द्रेग को कृति करनेशाना है' और जब सक राम-द्रेग हैं, तब तक मृति भी सम्भव नहीं। इनववार नैयानारों की दृष्टिय नैतिक पूर्णता को प्राप्त करने के लिए नैया कहा वा परिशाय कर जीवनपुर्ति को अनायहम्य समाना आवारक मता समा है।

कैन क्यांन के अनुगार एकान्य और आया निक्तात है पांकि में मार्ग के बनाउ क्यों का अपनार करने हैं। जैन सरवात में प्रापंक मता अगत पूर्ण का गाड़ मार्ग गाये है—अनतवायां कर बन्तु । एकान्य उपने से एक कर हा है। इस्क कर सा है। इस्क ही नहीं, बहु एक के प्रकार के साथ कर का निर्मेण भी करता है, अपने भागों में कर 'वता' ही है, मात्र वहीं गार्ग है। इस बार एक और बहु अनन्त मत्य के अनेक्षेत्र क्यों का अपनाय करता है। यार्ग और बहु अनुन्त के आन को कुंडिया एवं भीन्त करता है। आयह भी उपित्ति में अन्तर प्रवाद को आपने की निमागा ही नहीं हैंगे, तिर साद या परमाय का साधानकार सो बहुत दूर की आत है। यदि हुए देश में कि हुए की ही समुद्र समाने कम जार सो न तो कोई उमें उपने विकास सिंह सुत्र साथ आप है है और म उसे अयाह जरपीय का कांन्य कर सकता है। यदी स्थित एकास या आप है और म उसे अयाह जरपीय का कांन्य कर सकता है। यदी स्थित एकास या आप

दूगरे, आग्रह स्वय एक बन्यत है। वह वैचारिक सामनित है। तिवारी का परिवर्ष है। आग्रातित या परिवह पाहे पदार्थी का हो या विचारी का, वह निश्चित ही बन्धर्य

रे आचारांगचूचि, ११ अ१

है। बायह विचारों का बन्धन है और अनावह वैचारक मुख्यि। विचार में यद तक आह है, तब तक राग हुआ। यदि पय रहेगा, वो उत्तका अधिवाध भी होगा। प्राप्त प्राप्त हुं, तब तक राग हुआ। यदि पय रहेगा, वो उत्तका अधिवाध भी होगा। प्राप्त प्राप्त है। विचारों का स्वाप्त है। उत्तव है। विचार के बायह के उत्तव विकार है उत्तव है। विचार के अधिक के स्वाप्त है। अंगापायों ने नहां है कि चन्यन के तिवते विकार है उत्तरे ही नवचार (इंग्टिकोण) है और निवते नवचार, इंग्टिकोण या अधिकालि के बन है उत्तरे ही नव-स्वान्यर (पर-समय) है। अधिकाल विचार अध्यादकार अधिकालि के सामित नहीं स्वाप्त स्वाप्त निवति है। यदिन प्राप्त स्वाप्त नहीं होती। भूवित प्राप्त साम्यव की में मही, करने प्राप्त स्वाप्त स्वाप

मगरान् महाबीर ने बताया कि आवह ही सत्य का बायक दश्य है। आवह राग है भीर कहाँ राज है वहाँ मञ्जूर्ण सत्य का दर्शन समय नहीं । सान्पूर्ण सत्य का ज्ञान या ^{के} वन्त्रान नेवल अनावही को हो हो सकता है। भगवान महावीर के प्रथम शिष्य एक मन्त्रांसी गौतम के जीवन की घटना इसकी प्रत्यदा साक्ष्य है। यौतम की महावीर 🕷 भीवनकाल में कैवस्य की उपलब्धि नहीं हो सकी। गीतम के वेदलजान में आसिर कौन सा तच्य बायक बन रहा था ? महाबीर ने स्वय इनका समावान दिया था । उन्होंने गींदम से कहा था, "गीतम ! तेरा मेरे प्रति जो ममत्व है, रागारमकता है, वही तेरे वैदलतान (पूर्णतान) का बाधक है।" भहाबीर की स्पष्ट घोषणा वी कि सस्य का सम्पूर्ण दरीन लाग्रह के घेरे में लड़े होकर नहीं किया जा सकता। सत्य तो सर्वत्र उपस्थित है केवल हमारी आग्रहयुक्त या मताघद्गिट उसे देख नहीं पाती है और यदि देखती है वी च्छे अपने दृष्टिराग से दिनित करके ही । आग्रह या दृष्टिराग से वही सस्य असस्य बन णावा है। अनायह बा समदिष्टित्व से बहो मरब के रूप में प्रकट हो जाता है। अव-महाबीर ने कहा, यदि सत्य की पाना है तो अनाग्रही या मतावादी के घेरे में ज्यर वठी, बीपवर्शन की दुष्टि को छोडकर सत्यान्वेपी बनी । सत्य कभी भेरा या पराया नहीं होता है। सत्य तो स्वय अगवान है (सच्चं खरू अगव)। वह तो सर्वत्र है। दूमरों के सरवों की शुरुलाकर हम मत्य को नहीं पा सकते हैं । सरव विवाद से नहीं, समन्वप से प्रकट होता है 1

मारा ना दर्शन केवल बनावही को ही हो मकता है। जैन धर्म के अनुगार मारा ना प्रतट आयह में मही, बनावह में होता है। मत्त्र वा सावक बीतराम और अनावही होता है। जैन पर्म अवने अनेकात के निदान्त के हारा एक बनावही एवं समन्यारास्त्र नृष्टि प्रमुद्ध करता है, यांकि वैपारिक बाहित्याना में नामान्य किया वा यके।

बौद्ध आचार-दर्शन में बैधारिक अनाग्रह

बीद आवारत्यांन में माप्तम मार्ग की पारणा अनेकालकार की विवासणी की ही तक रूप है। । इसी माप्तम मार्ग में पीनिकार लेक से अवाहत की पारणा का दिशा हुआ है। कोद दिवारकों ने भी सार की जनते कहा भी में पुत्र देशा और यह स्वा का गय की अनेक पहुरूकों के साथ देगाना ही विद्वात है। येगावा में कहा सच्च है कि दो साम का गय की बहु देशा है वह मूल हैं। गीलावत हो साथ की सी (अनेक) पहलुओं से दरात है। वैचारिक आवह और दिवाद का बम्म एकारी हुटिं कीम से होता है, एकावदारी ही आवन से समक्षेत्र हैं और विवाद से उन्हार्य हैं।

कोड दिवारपाग के अनुगान लागत, वण या जांधी दृष्टि राग के ही कर हैं के इस त्वार ने वृद्धिन्याम में नन होगा है वह लगा में बनह बोर दिवार ना वृद्धा करता है और न्या भी आनित के बोर काम्य अन्य ना रहा है। इस हिसार ना वृद्धा करता है और न्या पा आग्रत के जगर उठ नाता है, वह न तो दिवार में पाणा है भी न कपण में। दूब के जिल्ल पार वह मार्थणा है, "यो अपनी दृष्टि में दृष्टा में दृष्टि में दृष्टि में प्रशाद के मार्थणा है। हम विश्व के जिल्ल पार वह मार्थणा है, "यो अपनी दृष्टि में दृष्टि में दृष्टि में दृष्टि में प्रशाद के स्वर्ण करता है। दिवारी पाणा पर विषय हो, यह द्वार वह स्वर करहे हो साहान करता है। विभी पाणा पर विषय हो, वह समूच्य दगार में बनह नहीं करता।

में विचार के दो कर बताना है। एक, यह अपूर्ण या प्रशामें होता है; पूर्ण- में किया प्रशामित वा वारण होगा है। विचार को निविद्या मुझि बतानिवाले मह में केवल दिवार करें। गायण महन्यों की वो कुछ वृद्धियाँ है, परिवृद्ध करें हो निवार हम वर्ष में महि परता। पृष्टि और जूरि को हम कर नेवारा, आमक्तिरहित वह वर्षा वर्ष करें। शिवा पर्या करें। होता मा कर को हो विचार करें। होता महि परता। पृष्टि और प्रशास करें। होता महि परता। प्रशास के महि वर्षा के हम कर नेवार करें। होता वर्षो है। यदि को होता महि होते। के विचार करें है की कर नहीं होता। के विचार के वर्षा कर होती होता। के विचार कर होती होता। के विचार के वर्षा होता। हि वर्षो होता कर होता होता। हि वर्षो हि वर्षो होता है की होता है के वर्षो होता। के वर्षो होता। के वर्षो होता। के वर्षो होता। हि वर्षो होता होता। हि वर्षो होता है के वर्षो होता। के वर्षो होता। हि वर्षो होता। के वर्षो होता। हि वर्षो होता। के वर्षो होता। हि वर्षो होता। हि वर्षो होता। हि वर्षो होता। होता। हि वर्षो होता। हि वर्षो होता। होता। होता। होता। होता। हि वर्षो होता। ह

१. घेरणाया, १।१०६. १. मसनियात, ५०।१६-१३

२. चदान, ६।४.

बह सम्कार, उपरित तथा तृष्णा-रहित है । ""

गीवा में अनाग्रह

वैक्ति परमरा में भी जनावह का ममुचित पहरण और स्थान है। गीवा में बारू-यार भारत की दृति बाहुरी वृत्ति है। योक्तण करते हैं कि बाहुरी स्वाम से नित्त में से प्रमुत्त मान और यह से पृथ्व होकर नियो प्रश्नार मी पूर्व म होने वाली काशनाओं का भाषय में साम में रियम निवालों की वृद्धा करते अच्छा कारत्यों से पृथ्व हो कार में म्युति करते पहरें हैं। एतना हो गही, भारत का साम तर को सो सामस्वाण याता की वित्त करते पहरें हैं। गीवा में साबहुत्य तर को सामत तर मोर सामह सो मूर्तिक से सारमा बहा है। मीवा में साबहुत्य तर को सामत तर मोर सामस्वाण पारता से वामन सामस्वाण का मुन्तिक में सारमा बहा है। मामस्वाण सकर को जैन परमार के सामत वेचारिक मामह सो मूर्तिक में सामम तरहें हैं। वित्त का मामस्वाण में से कहते हैं कि विदालों सो सामी की पूर्ण माहत हो माने से से सामातिला, सामन-अन्यवाल में पृष्ठा और विश्वास यह माने प्रभाव है। कारता है। मनते हैं, भीत वा मही। में सम्बाल चित्त को सरकाने वाला एक महत्त्व पत्त है। सामस्वाण का स्वाण स्वण स्वाण स्वाण

६.क्यूरे, ६२

र. मुनिश्चात, ५११९, ३, १०, ११, १६-२०. ३ वीटा, १९-१०.

५ विवेरमुकामन्ति, ६०.

२. वही, ४६१८-६. ४. वही, १७११, १८१५ 🗳

है। देस प्रकार हम देलते हैं कि आवार्य सकर की दुल्लिमें वैपारिक आयह स दार्गनिक मान्यनार्गे आण्यास्मिक सापना की दृष्टि में अधिक मून्य नहीं ज्याती है वैदिक मीति वेला कुकाचार्य आदह की अनुचित्र और मुर्गना ना नाहण मानी हुए वहते हैं कि सन्यन्त काप्रह नहीं करना चाहिए क्योंकि अदि सब जगर नाम का नारण है। अरान्त दान में दरिइता, अध्यक्त कीम में तिरम्बार और अन्यन्त आग्रर में मनुष्य भी मुर्खता परिलक्षित होती है। वर्तमान मुग में महारमा गांधी ने भी वैभारिक प्रापर को अमृतिक माना और सर्वधर्म समझाव के लग में वैचारिक अनावह पर जोर दिया। बन्तुत आग्रह सन्य का होता काहिए, विकास का नहीं। सन्य का आग्रह तभी है सबता है जब हम अपने वैचारिक आवहों से उपर उठें । महान्मात्री में शन्य के आई को तो स्वीकार दिया, केविन वैचारिक कायहाँ को बभी स्वीकार नहीं दिया। उन्हीं सर्वधर्म समग्राद का निद्धान्त इसका ज्वलन्त प्रमाण है। इस प्रकार हम देलते हैं कि जैन, बीड और बैदिक शीनों ही घरापराओं में बनादह को मामाजिक जीवन की वृत्ति से सदैव महत्त्व दिया जाता रहा है, वयोंकि वैचारिक सथयों हे समाज की बचाने वा एकसात्र भागे अनायह ही है।

वैचारिक सहिष्णता का बाधार-बनायह (बन्कान दरिट)

जिस प्र नार भगवान् महावीर और भगवान् बुद्ध के नाल से अवारिक सर्वर्ष वर्ष-स्थित में और प्रत्मेक मत्तवादी अपने की सम्यव्दुव्ही और दूसरे की मिध्यादृष्टी वह रहाथा, उसी प्रकार वर्तमान बुग में भी विवादिक संवर्ध खपनी चरम सीमा पर है। सिद्धान्तों के माम पर मनुष्य मनुष्य के बीच भेद की दीवार लीची आ रही है। वहीं मर्स के नाम पर, तो नहीं राजनीतिक बाद के नाम पर व बदतारे के विश्व विपवन^म किया जा रहा है। धार्मिक एव राजनीतिक साध्यशियकता जनता के बानम को उग्मादी बता रही है। प्रापेक मर्मवाद या राजनीतक बाद अपनी सत्यता का दावा कर रहा है और दूसरे की 'भागत बता रहा है । इस धामिक एव शावनेतिक उन्माद एवं बसहिं गुर्वी के नारण मानव मानव के रस्त का ब्यासा बना हजा है। आज प्रस्थेक राष्ट्र का ग्रं विदय का बातावरण सनावपूर्ण एवं विद्युव्य है। एक और प्रश्मेक राष्ट्र की राजनैतिक पार्टियों मा भामिक सम्प्रदाय उसके आन्तरिक बातायरण को बिरास्त एवं जनता के पारस्परिक सन्बन्धों को तनावपूर्ण बनाये 💵 है, तो इसरी ओर राष्ट्र स्वयं भी अपने को विसी एक निथ्टा से सम्बन्धित कर गृट बना रहे हैं। और इस प्रकार विस्व के बानावरण को सनावपूर्ण एव विश्वकृष्य बना कहे हैं। मात्र इतना ही नहीं यह वैचारिक अमहिरणुता, सामाजिक एव पारिवारिक जीवन की विवास बना रही है। पुरानी और नई पोड़ी के वैवारिक विरोध के कारण आज समाज और परिवार का बातावरण भी अज्ञान्त और नल्हपूर्ण हो रहा है। वैचारिक अख्यह और स्थान्यता के इस युग में एक

१. विवेशनुहासणि ६१.

२. शकनीति, ३।२११-२१३.

िये दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो लोगों को आशह और मतान्यता से ऊपर उठने के जिम रिसानित्य है यही । मणवान बुद्ध और मणवान बहावीर दो ऐसे महापूरण हैं निक्ति का मेचारिक अमहिल्लुता की विश्वेसकारी यहिन को समझा था और उन्होंने क्पने मा निर्देश दिशा था । वर्षमान में मो पामिक, राजनीतिक और सामाजिक जोवन में भी मेचारिक सच्चे और तनाव उपस्थित हैं जनका सम्मक् मणापान करही महापूर्यों मी रिपार मालों के द्वारा लोगा जा मकरा है। आज हमें विश्वार करणा होगा कि देव भीर महानोर की अनायह दृष्टिक है हारा किस प्रकार पार्मिक, राजनीतिक और सामाजिक महिल्ला को विश्वेसय किया वा सकता है ।

षामिक सहिष्णुता

मभी धर्म-माधना पद्धतियों का मुख्य कदय राग, आसरित, अह एव तृष्णा की समाप्ति रहा है। जैन धमं की माधना का लक्ष्य बीतरागना है, शी बौद्ध धर्म का सामना-सहय बीदनृष्ण होना माना गया है। वहीं बेदान्त में बह और आसन्ति से ऊपर उठना ही मानव का साध्य बताया गया है। लेकिन क्या आग्रह वैवारिक राग, वैचारिक आमिकि, वैचारिक कृष्णा अथवा वैचारिक अर्ह का ही रूप नहीं है ? और जब तक वह हपस्यित है धार्मिक साधना के क्षेत्र में लक्ष्य की सिद्धि कैसे होयी ? पून जिन साधना पढितियों में बहिमा के आदर्श को स्त्रोकार किया गया सनके निय भाग्रह या एकान्त वैचारिक हिंसाका प्रतीक भी बन जाता है। एक बोर सावना 🖷 वैसन्तिक पहलू की कृष्टि से मदाप्रदृ वैकारिक आमन्त्रिया रागका हो तर है सो दूसरी ओर साधना के सामाधिक पहलू की दृष्टि से वह वैशारिक हिसा है। वैशारिक आसंकित और वैशारिक हिंगा में मुन्ति के लिए धार्मिक क्षेत्र में अनावह और बनेकान्त की सामना अपेक्षित है। बस्तुन, धर्म का आविश्रीय मानव वादि में शान्ति और अमहयोग के विस्तार के लिए हुमा पा। धर्म मन्ध्य की मनुष्य से जोडने के लिए बा, लेकिन आज वही धर्म मनुष्य मनुष्य में विमेद की दीवारें लीच रहा है। चानिक मठान्यता में हिमा, संपर्य, छल, ण्ड्म, अन्याय, अन्याश्वार क्या शही हो रहा है ? क्या वस्तुत इसका कारण धर्म हो सकता है ? इमका उत्तर निश्चित कर से 'ही' में नहीं दिया जा सकता। यथार्थ में 'धर्म' नहीं, किन्तु धर्म का बावरण बालकर मानव की महत्वानाथ है, उनका बहकार, ही यह मत करवाता रहा है। यह घम का नकाव ओडे अवमें है।

धर्म एक या जनेक — मून दश्त गह है कि बना वर्ष जनेक हैं या हो सकते हैं? इस प्रशंक का उत्तर अनेकाणिक धीनों से यह होगा कि पर्य एक मी है और सनेक भी, बाध्यासम्बद्ध पर्य ना वर्षों का बाध्य एक है जब कि जायनात्तक वर्ष अनेक हैं। इस में मोर्ग की एका और मण्यन कर से अनेकता को हो प्रपार्थ पृथ्विकोण पर गई। धर्मा वर्षों का नाम्य है सम्पर-काब (बार्मा) वर्षों

मान्ति की रवापना तवा उसके किए दिशोग के बनक राग देव और कारमना (सहरार) का निराहरण । तेनिक रिक्टिंग और करिसवा के निराहरण के उनाम कारों है। भैन, भौड मीर गीता का समाज कांन विचारमेंद त्राराम होता है. शेविन यह विचारमेंद विशेष का आधार मही कन महता। पत्र हो छात्र को कोर छात्रुव होते हे वशकर विशेषी रही कहें वाहकते । एक हो हैं है से मोजित हीने बाजी परिण से निश्ची हुई बिध्यान रेनाओं में पारस्वीक स्थित प्रताम वान्य पान पान पानम छ । एका हुई । वामरन पान प्रताम प्रताम वह वार्य हैं होना नहीं हैं । प्रतीह केम हैं ग्रीह प्रतिक देशा में एक दूधरे को बादने की समझा कही होती है किंगू की ही बहु केंग्र वा परिवास कर ही है वह दूगरी देशाओं की सवस्त ही बारती है। शीस्त सती एक में हैं! तापत्रकृती पत्नों की अनेवता विश्वत हैं। अत वरि वती सा ताप्य तुन है ती हर विरोध होता ? अनेहानत वा सनावह धर्मों की नारनपरस सुनमून एकता और साधनगरक अनेकता को इतित करता है।

विरुक्त के विभिन्न वर्षाचारों ने अपने वृत्र को तारराज्य परिस्वितों हे प्रमानन होनर अपने विद्वारती यन सामना के बाह्य नियमों का प्रतिपादन किया। देश-सामन वर्षिकतियों और तावक हैं। तावना के तावता की विधिनता के साथ पर सारा-है बाह्य हुनों में मिलवाओं का का जाना का स्थापका का स्थापनाता का जाना की साम जाना हुना भी हिन्तु म नेपार को अपने वार्तावान, का का जाना क्वासावक हा वा बाद प्या है जात असी (स्वाप्तक हो वा बाद प्या है का जा जान न्युर्क र । मारा माराजास्त्र के आठ सम्बद्ध (गांतास्थवत्) बार उद्यक्त स्व व वारा प्राप्त बावह और बहुंबार में उसे क्षणे वर्ष वा तापना-दर्शत की ही एक बाद एवं अनेतर सर विकित मैतनिय का आरम हैया। स्तुतकन्त्रभाव बड़ा विचित्र हैं। उसके सह हो अरा है भोड़ जाते ही पह सकता समाहा अक्ता काले को तीवार हो बता है। वर्धा विश्वन महितामहोत्रों के निर्माण का एक कारण अवस्थ है लेकिन वही एकमान कारण नहीं है! वह राज्यात को है से कारण वक्ष ह थावन वहां एकवान का प्रतिस्थात की है से कारण है है और इसके बांगिएन वादक राज्या को विकासकार वादक का स्वक कारण रह ह बार स्वक कारण स्व ह बार स्वक कारण स्व ह बार स्वक कारण स्व है विविधी है स्वीपन है लिए भी सम्मान करें। हें अवशास प्रभाव के कहते हैं है वह अवश के संवासन के स्टिए भा सम्बन्ध स्थापिक साम्बन्ध बनने हैं बहता को दो बनों में निस्मतित हिंचा जा सहता है है. सन् पित कारण और ? जिल्ला कारण । है. अनुवित कारण (है) दियों के कारण (१) क्विम स्वाप्त को श्रीमिद्ध की निष्या है कारण, (१) क्विम स्वाप्त के कारण (४) हिमी आसर सम्बंधी विकास में अंतरण के अस्ति, (३) प्रवस्थायक के अस्ति, (३) प्रवस्थायक के अस्ति, (५) दिनों साम को बाच करते की दृष्टि से वर्ष (६) किनों साम्बनसिक बरमा पा तिका करता, धन दूव बात क अनुवाद ग्यापन या पारवान करन का दूव प्रचार बारवों से कृतिम धीन को धीरकर धेर सभी बारवों से जराज मारवान आहर, वाधिक संबद्धितीया और वाध्यवाधिक कर्या की काम कुन हैं। दिरंद ही दिशा का अपनेशाय के क्षेत्र का स्व कर है। अस्ति के असी को असी की असी की असी का कर कर है। नित्त में अवस्य दुष्ट रंग कराये हैं। साम्बर्ध को यह है कि इस समा मार्थ अग्रहण मुर्च-

स्त्रा और रण-प्याप्त को धर्म प्रा बाना पहनाया थया। गान्ति-प्रशाम धर्म ही स्वापित पर कारण कना । बाद के बैस्तिन सुने पूर्व पार्टिस बनाया का एक मुक्त कारण यह भी है। बसी। विभिन्न मही, पूर्व और बारों के बाद्य किमना विभिन्नित होंगे हैं क्लियु बीट हमारी दृष्टि क्याप्त और समावही हो। वो दनमें भी एक्ना और सक्त्य के पूच विलितित हो बादने हैं।

स्रवेशन्त दिवार-वृद्धि दिक्षिण सर्म गरुद्राभों यो गर्माण से द्वारा १९४० वर्ग वर्ग प्रमान मही चरतो है क्योदि वैद्योजन प्रविश्वर वृद्धि स्वकार्य दे वर्ग प्रविश्वर विश्वर प्रविश्वर प्याप प्रविश्वर प्रविश्व प्रविश्वर प्रविश्व प्रविश्व प्रविश्व प्याप प्रविश्व प्रविष्य प्रविश्व प्रविष्य प्रविश्व प्रविष्य प्रविष्य प्रविष्य प्रविष्य

मनेनान्त के नमर्थक जैनाकार्यों में जर्बंब व्यक्तिक महिर्जुता का वरिषय दिया है। सामार्ग हरित्य वो व्यक्तिक महिर्जुता तो नर्वावित्त हो है। अपने प्राप्य साहस्वकार्य व्यक्तिया से उन्होंने बुद्ध के अनारामात आक्रिय स्वायत्यत्व के देश्वरण नृष्याहा, वेशान्त कैन नर्वायत्वाद (क्षावाद) में भी सर्वाट दिलाने का प्रयान किया। उनको सम्बन्ध-कारी तृष्टि का संत्त हुन कुने में कर बुके हैं।

स्थापनार आचार्य हैनचण्ड ने भी शिव-प्रतिमा की प्रयाद करते समय सर्वदेव-सममाव का परिचय देते हुए कहा चा---

> भववीजांहर अनेना, रागाद्याध्ययमुपानता यस्य । मह्या या विष्णुर्वी हरी, जिनी वा नगरतस्यै ।

ममार परिश्लमण के नारण शागारि जिसके शब ही चुके हैं, उमे मैं प्रणाम नरता हूँ चाहे यह बक्षा हो, जिल्लु हो, दिन हो या जिल हो ।

रपाध्याय यद्योविषय जी लिखते हैं---

"सञ्चा धनेवान्तवादी दिनी दानि वे देव भद्दी करता। वह एक्यूमं दृष्टिकीम (एक्से) की पर प्रवार पालान्य दृष्टि ने हेक्साह देवें बादी दिन्दा अपने वृत्रों को। वसीके अनेवान्यवादी में पूर्णाणिक वृद्धि नही हो तत्त्वी। अस्तव्य से स्वन्य प्राप्तव नहे अपने वा अधिवादी वहीं है भी ल्यादाद वा आव्यव्य केट्टर सामूर्ण दर्शनों से समान -एसता है। सम्प्रपत्त भाव हो साम्त्रों वा सुद्द स्टूट्स है, सही वर्शनाद है। इस्ते वर साम्त्र में कृष्ण पत्त का साम्त्रों सम्बन्धः है। स्वार्ण वर्शनाद है।

الما في الم المرافع المرافع المرافع المرافع لما المرافع المرا त्रेच, वर्षेत्र अहेर गरेवा का समाम हार्यः In the day hord that was by well to are teacher aim name defined with \$1 لفضرنه عبايعن

and an analog and an another which is delined by the said and and an another and an another and and an another an another and an another and an another and an another an another and an another an another and an another an another an another and an another an another and an another an another and an another another and an another another and an another another and an another and stayled the their and and stayled their and the stayled to the stayled the stayled to the st sequence of the sequence of th क्षेत्रमान के क्षेत्रमान के त्या क the new generals need to be stated by the state which style that and and which style the state of the state o the man analysis and man of this to be the man and an analysis and an analysis and the second of the The water and all a bat a telling and all all all a bat a delicated at the a telling and all all a bat a telling and a bat a telling a bat a telling and a bat a telling a bat a telling and a bat a telling and a bat a telling a bat a telling a bat a telling and a bat a telling a and any angles of the state of and the sale of th बड़ी मान र जारे को ही नावराज स कर है।

मात्र के राजनीतृहः सीहत है सरेराज है तो ब्यार्शाहरू वृत्तिया के बाहि सहित्यामा भी र मारकार भारत व व्यवस्थान के शाक्तामा स्वावस्थान के साथ कर साथ के साथ कर we would be a supply to the supply of the su हैं राजदीक भीवन की तको को माने के दिन के दी जगन हरता, का दिन के की जान के तक के जान के तक के तको के तक के तको के तक के तको के तक के तको के तक के तक के तको के तक ्याम अस्ति के क्षेत्र के क् व्यवस्थात्र का महिन्दा कारणा व्यवस्थात्र के स्वतंत्र के स्वतंत्र के स्वतंत्र के स्वतंत्र के स्वतंत्र के स्वतंत स्वतंत्र के स्वतंत्र के स्वतंत्र कि स्वतंत्र कि स्वतंत्र के स् A need to be a second of the s स्य अधार प्राप्त प्रकार अञ्चलका स्थापित स्थापित होते से स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्य अधार प्राप्त प्रकार स्थापित and saying and proposed and the substitutes of the departs of substitutes of the substitu कारण करता है और प्रतिमानक जात की कार विवाद स्थापन करते वा वानान करते हैं। वार्तीन हरते की वानान करते करते हैं। भाग भाग ग्वार का वजह है, वड़ी वह एउनीनिक रोज में बीवोर्ग ज बाउर र भारतीय राजनीतिक वज् हैं, वड़ी वह एउनीनिक रोज में बीवोर्ग ज बाउर रू भारतीय राजनीतिको पर है। रे. अस्तातममार, १९०७३.

[[]सामाजिक एवं पारिवारिक सहिष्णुता

नौरुम्बिक क्षेत्र में इस पद्धति का उपयोग परस्पर कुटुम्बों में और कुटुम्ब के सदस्यीं में सपर्य को टालकर मान्तिपूर्ण वातावरण का निर्माण करेगा । सामान्यतया पारिवारिक जीवन में संघर्ष के दो नेन्द्र होते हैं-पिता-पुत्र तथा सास-चहू 1 इन दोनों के तिवादों में मूल नारण दोनों का दृष्टि-भेट हूँ। पिता जिस परिवेश में पला है उन्हीं संस्कारों के आपार पर पुत्र का जीवन ढालका चाहता है। जिस मान्यता को स्वय मानकर वैडा है, उन्ही माग्यताओं को दूमरे से यनवाना चाहता है। पिता की दृष्टि अनुमवप्रधान होती हैं जबकि पुत्र की दृष्टि तक प्रधान । एक प्राचीन संस्कारी से धस्त होता है तो दूमरा उन्हें समाप्त कर देना चाहवा है। यही स्थिति साथ-वह में होती है। सास यह अपेक्षा काती है कि बहू ऐसा जीवन जिये जैसा उसने स्वय बहू के रूप में जिया था, जबकि बहु अपने युग के अनुरूप और अपने मातुपता के संस्वारों से प्रभावित जीवन जीना पाहरी है। मात्र इनना ही नही, उसकी अपेका यह भी होती है कि वह उतना ही स्पतन्त्र जीवन जीये जैना वह अपने माता-पिता के पास जीती वी । इसके दिपरीत रवमुर पक्ष उससे एक अनुशासित जीवन की अपेक्षा करता है। यही सब विवाद के कारण बनते हैं। इसमें जब तक सहिल्यु दृष्टि और दूसरे की स्थिति की समझने का प्रयाम नहीं किया जाता तब तक संघर्ष समान्त नहीं ही सकता । बस्तृत: इसके मूल में को दृष्टि मेद है उसे अनेकान्त पद्धति से सम्बक् प्रकार जाना का सकता है।

भा पृथ्य महिन्द्र के क्रिकेशन पढ़िंदि के सम्बन्ध में कोई विचार करें, कोई निर्मय वार्त्विक्ता सह है कि हम जब दूगरे के मस्त्रण में कोई विचार करें, कोई निर्मय में तो हमें स्वरं करने को उस मिनित में बढ़ा कर तोचना चाहिए। चूररे ने मुनिका में स्वरं को स्वा करने हो उसे सम्बन्ध अध्याने को पूत्र की मुनिका में बता कर स्वरं वार नो अपेसा करता है, उसके महले अपने को पूत्र की मुनिका में बता कर स्वरंग कर हो स सिक्तारी कर्नवारी के तिन अपने मान केना चाहाद है उनके पहले स्वरं को यह स्वित में बढ़ा करें, जिर निर्मय की स्वरंग के प्रति हम कि स्वरंग के हिंदियु मानम का निर्माण हिन्दा जा सकता है और मानव-वार्ति को बैचारिक संपत्रों है स्वरंगाता सरवाई।

सनायह को सक्यारका के कांत्रत—सह अनत्य पहलुओं से मुन्न है तथा मानबीय मान के नाथन सीमित एव कांचेत हैं, अदा सामान्य व्यक्ति का आन सीमित (आर्थिक) और लांचेत होत है। पूर्पे आयह, जो सक्तुन - बेलालेत पात हो है, सब्द को रोगेत कना देता है। पानांसिका चुढि जो सद्य को विष्टुष्ठ कर देती है। परिचामस्वरूप कांच्या पात्रिक को जो भी आप होता है यह अपूर्ण को होना हो है, अगुद भी होता है। अत- मधान्येचक एवं विकास्त्र की सावस्वरूप की तिम्म है—

१. सम्पूर्ण सस्य का जान सामान्य मानव के लिए सम्मव नहीं है, सत्य के

भीत, कीख भीर गीता का समाप्त कार्त

पहलू हमारे लिए आयुक्त वने वहने हैं। बन. दूसरों के विवार एक जात में भी गरयता गम्भव है, यह बात स्वीकार करनी होगी ।

 मध्यान्वेपण आग्रहबुद्धि के द्वारा सम्भव नहीं है । अनावही दृष्टि ही मध्य की प्रधान कर सकती है।

रै राग-द्वेपजन्य सम्कारों से ऊपट उठकर 'मेरा मो सक्ता' के स्थान पर 'स्वा मो मेरा यह दृष्टि ज्लाना चाहिए। शन्य चाहे अवने थान हो मा विशेषी के

पास, जुने स्वीकार करने के लिए नर्देव संवार रहना चाहिए। ४ जब तक हम शान-देश के शरवारों ने अपने की उत्तर नहीं उठा मके कीर पूर्णता को नहीं प्राप्त कर गर्के तब तह वेदन मन्य के प्रति त्रिज्ञामा रमना

चाहिए । सरप अपना या परावा नहीं होता हैं । ५. अपने विचार पताके प्रतिमी विपताके समान तीव समानीयक दृष्टि

रतना चाहिए। विपक्ष के साथ की उसी के पृत्यिकोण ने आपार पर समझने का प्रवान

करना चाहिए। ७. अनुभव या ज्ञान की वृद्धि के साथ यदि वये सरवों कर प्रवटन ही तथा पूर्व-ग्रहीत विचार अगरय प्रतीन हो सो आवहबुद्धि का स्वाय कर भये विचारों हैं। स्वीकार करता चाहिए और बुरानी मान्यताओं को तदनुवन संगोधित

करना चाहिए। ८ विरोध की स्विति में प्रकापूर्वक समस्वय के मूत्र लोजने का प्रयाम कार्या

 दूसरों के विकास के प्रति महिल्लु वृद्धिकील रखना चाहिए, क्योंकि उ^{त्के} विचारों में भी गरवता की सम्भावना निहित है।

जनासक्ति (अपरिग्रह)

अहिंगा और अनागह के बाद र्रंत आचारदर्शन का तीसगा प्रमुख गिद्धान अर्गाः सिति है। अरिमा, अनावह और अमासिन इन तीन तस्वी के आपार पर ही जैन आचारदर्गन का अन्य महल लड़ा है। यही सनामनित सामाजिक नैतिकता है सेन में मपरिप्रह यन जाती है। भीन यर्भ में अनासिक

भीन आचारदर्शन में जिन गाँच महात्रतों का विवेचन है, उनमें हैं तीन महा^{त्रत} ् अन्तेष, इश्चर्य और अपरिषद् अनागन्ति के ही व्यावहारिक च्य है। व्यक्ति में अन्तर

.. सागन्ति दो स्पों में प्रकट होती है-- १. संग्रह-मानना और २. मीग-भावना ! रभावता और भीन-भावता में प्रीरंत होकर ही मनुष्य दूसरों के अधिकार की बस्तुमी बाजयहरूप करता है। इस प्रवार क्षामित बाहान तीन व्यों में होनी है— १. बाइन्स (गोपन), २. भोग और ३. संबद्ध। बामित के तीन व्यों वा निवद करने के निष् जैन बाम्यारस्तान में सत्नेय, ब्रायम्य और क्षयरिवह महाउद्दो वा विधान है। बाइन्हींत का क्यरिवह से, मीनवृत्ति वा ब्रह्मयर्थ से और स्वयहण्यानृति वा सन्तेय महारत के निवह होता है।

उसराध्ययमपूत्र के अनुगार समय जागतिक दुःगों का मुल कारण तृष्णा है। वहा गरा है—विमश्री नृष्णा गमाप्त हो जाती है अमना मोह समाप्त हो जाता है और विमका मोह मिट जाला है उसके दुन्य भी समान्त हो आने हैं भे आसरिय का ही दूगरा नीम लोग है और लोश समग्र मद्गुणों का विनाशक है। है औन विचारका के अनुमार पुष्पा एक ऐसी शाई है जो कभी भी पाटी नहीं जा सबसी 3 दुष्पूर तृष्णा वा वभी सन्त नहीं जाता । उत्तराध्ययनभूत्र में हमें स्पष्ट करते हुए वहा गया है कि यदि मोने और चौरी ने कैलाग पर्वत के समान असक्य पर्वत भी करे कर दिये आयें की भी यह पुणुपे कृष्णा प्राप्त नहीं हो सकती, वर्षेकि धन चाहे वितना भी हो, वह मीमित है और तृष्णा भनन्त (समीम) है, अतः सीमित नाचनों से इप असीम तृष्णा की पूर्वि नहीं की जा वस्या । विस्तु अब तक सुरुणा धान्त नहीं होती, तब तक दू तो ही सुनित भी नही होती । मूत्रप्रताम 🖹 अनुमार यमुध्य जब तथ किमी भी प्रकार की आसांवत रणता है बहु दुल से मुक्त नहीं हो शनला। " यदि हम अधिक स्वष्ट धारदों में वह सी जैम दार्चनिनों भी दृष्टि में शुरणा या मासवित दु ल का पर्यायवाची ही। वन गयी है । यह वृष्णा या आसंदिन ही वरियह (संबद्धवात) का मूल है । आसंदित ही परियह है ।" जैन बाचायों ने जिम अपरिएह के गिद्धान्त का प्रतिवादन किया उसके मूल में मही अनासन्ति-मनान वृष्टि कार्य कर रही है। यद्यपि आसनिन एक मानसिक तथ्य है, मन की ही एक इति है, उपापि उसका प्रकटन बाह्य है और उसका सीधा सम्बन्ध बाह्य बस्तुओं से है ! वह सामाजिक जीवन को दूषित करती है । अतः आगश्चित के प्रहाण के लिए व्यावहारिक सप में परिवाह का त्यान भी जानस्थक है।

परिषद्ध या सवहन्ति सामाजिक हिना है। बीज आचारों की बुध्ट में समग्र परि-वह हिना से अयुरान्त है। क्योंकि निना दिना (वीपान) ने कबद सबस्थन है। क्योंक सगढ़ ने द्वारा पूर्मरों के दिनों मा हनन करता है जीर दस करते सक्त या परिषद हिमा मा ही एक कर है। यह हिमा या चीचन का जनक है। बनामनित को जीवन में उदारने के लिए जीन आपायों ने यह जायग्यक माना कि मनुष्य बाहा-परिवाद का भी त्यार

१. उत्तराध्ययन, ३२१८.

२. दशवैवालिक, ८१३८.

रे. उत्तराध्ययन, ९१४८. ५. दरावैशालिक, ६१२१.

४ सूत्रकृताम, १।१।२.

करें। परिवह-स्थान अनामका दृष्टि का बाह्य जीका में प्रमान है। एह और जिन्
सबह और दूसरों और अनामिल, इन दोनों में कोई मेठ नहीं है। यदि तमें मेस स्थित की भावना का उदय है तो उसे बाह्य कराहर में अनियार के ना भावन से साहित । अनामिल को सामगा को कामहादिक व्या देने के निया कुछ और ने स्थित अने अस्य जीवन में मान परिवह के स्थान का निर्देश हैं। दिस्स जीन मृति का आयानिक अपशिवहीं जीवन अनामका दृष्टि का वाही का सामा है। की दिखाई होने हुए भी व्यक्ति के मन में आयाशित का तरब रह ताना है, देशित हैं जिसा पर यह सामना कि दिश्च के सनते हुए सी अनामका दृष्टि का हुए ति

जैन आचाररांन में यह जावररक माना गया है कि बाया चार्च गृहुन है। ध्रमण, उने अपरिषद्द की रिशा में आगे बड़ना चाहिए। हम देमने हैं कि एएएँ। बगों की समझ एवं बोगण-वृध्ति में मानव-नारि को रिनाने रुप्ती में हाना है। है बाचाररांन के अनुमार सानियान और बमितरण सावता का आवायक कर्म केनिबगरसारां में रुप्पट रूप से यह नहा नवा है कि वो सामियान और सावित मही नरता उसकी मुक्ति समझ नहीं है। ऐसा उप्योक्त पापी हो है। नदिकाल के समितरांच सामाजिक एक बाम्यानियक विकास के अनिवार्य अग है। इसके हि बाम्यानियक एकरिया भी सामन नहीं। अद्या जैन अपनायों से नैविक सामना को इ म अनामरिय को अनिवार्य माना है।

का मुंल माना गया है । युद्ध बहुने हैं कि तृष्णा के मध्य हो आरे पर सभी बण्यन ह मध्य हो जाने हैं । तृष्णा दुष्मूर्य है। वे कहुने हैं कि बाहे लग्गे-मुमार्श में बर्गो मों, मेंतन उससे भी तृष्णायुक्त मुग्य की मुदिस मही होतों । प्रमापन दुक भी तृष्णा ही हुए हैं और निसे यह विश्वीत मोंन तृष्णा यह से होते हैं वर्ग के इसे हो बने रहने हैं, जीने सीती में बीटण बाम बहती रहिंगे हैं। प्रकारण में तीन प्रमार की मानी गयी है—१, सक्तृष्णा २, तिवस्तृष्णा स्वीद १ मान्यु सवतृष्णा सित्ताव्य या नने रहने को तृष्णा है, वह रायस्थानीय है। रिवन्तुष्णा में तृष्णा है। क्यार्ट कहिंग्यों को यन, विश्वत और वास्तृष्णा से आया र परप्पा में तृष्णा के 12 जेद सी साने वाये हैं। तृष्णा हो बायन है। यून है परप्पा में तृष्णा के 12 जेद सी साने वाये हैं। तृष्णा हो बायन है। यून है देश हिंग्यान लोग जा बन्यन को बन्यन मही बहुने से हैं में मोहें का बा

समुभित्रदाय, २।१२।६६, १।१।६५.

४. घटमपद, १३५.

बीड धर्म में अनासवित---वीद्वपरम्परा में भी अनासवित की समग्र बन्धनों इवं हु

टरडी का बना हो अथवा रस्सी का बना हो, अपितु दृढतर बन्धन तो सोना, चौदी, पुत्र, स्त्री आदि से न्हीं हुई आसवित ही हैं। "सुत्तनिपात में भी बुद्ध ने वहा है कि आमवित ही बन्धन हैं जो भी दुख होता है वह सब तृष्णा के कारण ही होता है। असवन मनुष्य आमनित के कारण माना प्रकार के दु स उठाउं हैं। असावित का शय ही दु सों ¶ा धर है। जो ब्यक्त इस तृष्णाको थश में कर छेता है उसके दुल उसी प्रकार समाप्त हो जाने है जैसे कमलपत्र पर रहा हुआ जल-बिन्दु शीध ही समाप्त हो जाता है। जुरणा से ही कोक और यस अस्पन्त होते हैं। शुरणा-मुक्त मनुष्य की न सी सस होता है भौर म नोक। दस प्रकार युद्ध की दुष्टि में आधनित ही धारतविक दुल है और ननामित्त ही सच्या गुल है । बुद्ध ने जिस जनारपवाद का प्रतिपादन किया, उसके पीछे भी उनती मूल दृष्टि बासवित-नास ही थी। बुढ़ की दृष्टि में बामवित, चाहे वह परायों को हो, चाहे वह किसी अशीन्द्रिय आत्मा के अस्तित्व की हो, बन्धन ही हैं। वस्तित्व की चाह तृष्णा ही है। मुक्ति तो विरायता या अनासक्ति में ही प्रतिफलित होती हैं।" तुष्या का प्रहाण होना ही निर्वाण है। मुद्ध की शृष्टि में परिग्रह या समह-कृति का मूल सही आनंतित या तृष्णा है। कहा गया है कि परिश्रह का मूल इच्छा (बासकित) है। अतः बुद्ध की दृष्टि में भी खनासकित की वृक्ति के उदय के लिए परि-पह का विमर्जन आबय्यक है।

भीता में कार्ताक्ष — जीता वे आपरारदांच का भी वेग्नीय जरूव जागानित है। महाराम गांधी में हो नीता को 'बनावार्त-जोग' हो बहा है। भोशाकार से भी यह दगर दिया है कि सामित को वाद क्षीर सोशावार्त्त के शिल में दिव हर ही स्थानित के बाद क्षीर सोशावार्त्त के शिल में दिव हर ही सोशावार्त्त के सामित के बाद का बाद की सोशावार्त के सामित के बाद का मंदिर ही सोशावार्त है। का सामित के बाद का देश के सामित के बाद का सामित के सामि

रै. यम्पपर, १४%, २. मुत्तनियात, ६८१% १. बहो, १८१६०. ४. येरनाया, १६१७१४. ९. यम्पपर, ११६. ६. बहो, २१६.

७. मजिसमितिकाय, शारिक. ९. गीता, १६११२-

८. महानिहेसपानि, शहरार-०. १०. बहो, १६११६.

सामाजिक धर्म एवं दावित

तमाजिह धर्म जैत सामारदर्गेन में समेत्रत सारवास्त्रिक दश्टिसे सर्वमी विवेचना की गरी

है, सरन् पर्म के सामाजिक पहलू पर भी नवील प्रकाश काला गया है । जैन क्लिएको ने मंच था नामाजिक जीवा की प्रयूचना गर्देश क्रीकार की है। स्थानियूर्व में

सामाबिक श्रीवन के सन्दर्भ में बन वर्मी का विवेचन उपान्यप हैं —ै यागार्म, २ मगरवर्ष, ३ राष्ट्रवर्ष, ४ शासक्दथर्ष, ६, ब्लवर्ष, ६, वनवर्ष, ७ संदर्ण, ८

मिद्रान्तपर्म (स्तुरपर्म), ९ चारितधर्म और १० अस्तिनायपर्म । इतमें से प्र^{दर मार्ग} सी पूरी तरह से गामाजिक ओजन से सम्बन्धित है ।

१ ब्रामधर्मे---ब्राम ने विशास, श्यास्था तथा आस्ति वे लिए जिन निपर्मों की ड[ा]र वानियों ने मिलकर बनाया है, जनवर पानन करना सामप्रमें है । यागर्थ मा सर्च है नि

भ्राम में हम निवास करते हैं, उस दाम की व्यवस्थाओं, मर्घाताओं एवं निवसों के व्यवस्था कार्य करना । बाम का अर्थ क्वतित्यों के कुलों का नमूह है । अतः नामूहित ^{जय में एक} दूनरे के महयोग के आधार घर बाम का विकास करना, बाम के अन्दर पूरी हाई

व्यवस्था और शान्ति बनामे रचना और आपन में वैमनन्य और बनेश उत्तान न हैं। चनके किए प्रयानशील रहना हाँ बामारमें ने प्रमृत सरव है। बाम में गान्ति एव स्वत्या नहीं है, सो बढ़ों के लोगों के ओवल में भी शास्ति नहीं रहती । जिन परिवेश में हैं

जीते हैं, उसमें शाब्ति और व्यवस्था के लिए जावश्यक रूप से प्रयत्न करना हुमार्ग वर्तव्य है। प्रत्येक ग्रामवानी सदेव इम बात के जिल् बानून रहे कि बमके विमी आवर्ष

से माम के हिला को चोट न पहुँचे । बामपर्य की कावस्था के लिए जैन आवामी ने हरी स्यविद की व्यवस्था भी की है। श्रामस्यविद बाम का मुलिया या नेता होता है। वार् स्यविर का प्रयान रहता है कि प्राम की व्यवस्था, शान्ति एवं विकास के तिए, प्रायक्ती

में पारस्परिक स्नेह और सहयोग बना रहें। २. नगरधर्म-प्रामी के अध्य में स्थित एक केन्द्रीय ग्राम की जी उनका व्याक साधिक पेन्द्र होता है, नगर बहा जाता है। सामान्यतः साम-धर्म और नगरवर्म में विद्येप अन्तर नहीं है। नगरवर्ग के अन्तर्गत नगर की अववस्था एवं प्रान्ति, नागरिर नियमो का मालन एव नागरिकों के पारस्परिक हितों का संरक्षण-समर्थन बाता है।

रै. स्थानाग १०१७६०

विशेष विवेधना के लिए देलिए---(व) धर्म ब्यास्या (श्री जवाहरलालजी म॰) (ब) धर्म दर्शन (श्री गुक्तचन्दनी मण्)

केदिन नागरियों वा उत्तरपारित्व वेयल नगर के दियों तक ही सोमिश नहीं है। युगीन ग़रवरों में नगरपर्य यह भी है कि मार्गरिकों के द्वारा धामवानियों वा पोशण न हो। गरपरलों में 1 वार्यपार्श्वय धामीमाननों को बनेता अधिक है। उनमें न वेयल अपने नगर के विकास एवं अपराचा का ध्यान एकता चाहिए बचनु जन नगय धामवानियों के दिन वो मी चिना करते पाड़िए: विनक्षे आध्यार पर नगर वो ध्यानमाजिक तथा धामिक स्वित्तर्या निर्मेर हैं। नगर में एक योग्य मार्गरिक के वर्ष में श्रीना, नागरिक वर्षाम्यों एवं नियमों ना पूरी करह पामन करता हो सनुष्य पर नवरपर्य है।

त्रैन मुत्रों में नगर को व्यवस्था कारि के लिए नगरकाविर की धोजना का उस्तेगर है। क्षापृतिक युग में जो क्यान एवं कार्य नगरशासिका अववा नगरिनम के अध्यक्ष के है, जैन परव्यक्त में बहुर क्यान एवं कार्य नगरस्वावर के हैं।

4. राजुवर्ध---वैन विचारणा के अनुवार अरवेड धाय पूर्व नगर रिची राजु का स्मे होता है और अरवेड राजु को आनी. एक विजिल्ड लंक्ना होती है औ प्राचेण रें एक राजु के लक्ष्मी के कर से अराज से में में नकर राजी है। एक पोर्च के लक्ष्मी के कर से अराज से में में नकर राजी है। राजु भी शांत्र कि चैदना अवसा जीवन की विचित्र अगांत्री से माने राज्य है। राजु भी शांत्र कि विच्या कारा ही राजुवर्ष है। आमुनिक लगांत्री से राजुवर्ष है। आमुनिक लगांत्री से राजुवर्ष का लाश्य है। राजुंग प्रवास प्रवास कारा है। राजुवर्ष है। आमुनिक लगांत्री से रिजे का परस्ता प्रवास कारा हो आमुनिक लगांत्री से राजुवर्ष प्रवास के साम कारा हो आमुनिक लगांत्री से प्रवास कारा है। विचार कारा में अराज्य है। अराज्य के लागांत्री के विच्या कारा । अराज्य के लागांत्री के विच्या कारा । अराज्य के लागांत्री के विच्या कारा । अराज्य के लागांत्र कारा । अराज्य कारा । अराज्य के लागांत्र कारा । अराज्य कारा । अराज्य के लागांत्र कारा । अराज्य कारा

У. पावण्यपर्य---वैन शावाती ने पावण्य की वहनी व्याच्या की है। जिसके द्वारा पाय पे सकत होता हो यह पावण्य है। "वसने बालिक निमृतिक के सनुतार पावण्य एक कर ना मार है। जिसके वह ती सर्वत हो, बालिक ने पायण्य जीतिक निपास ने पावण्य की वस्त विचार की पावण्य की वस्त वर्ष प्रविचेत निपास ने पावण्य की निपास ने पितास निपास निपास ने पावण्य की निपास ने पितास ने पावण्य की निपास ने पितास ने पितास निपास ने पावण्य की निपास ने पितास ने पितास ने पितास ने पितास ने पावण्य की निपास ने पितास ने पितास ने पितास ने पितास ने पितास ने प्रविचेत ने प्रवास ने प्याप ने प्रवास ने प्रवास

ı

१. धर्य-दर्शन, पु॰ ८६ १. दश्ववैद्यालिङनिर्धृतित, १५८.

क्षेत्र, क्षोड और शीश का मध्य स्टिस् १ ८००० रे

पासिक तिक्षा, सदस पूर्व चनन्याच्य के जिल चेक्ति करने करना है । हमारे क्षिण के प्रशास्त्रा स्पृतिक काकस्रोत समितिकारों ने जन्यत होत्रत होता होता विज्ञान कार्य प्रणासी

...

प्रशासा स्पेटित राजधीर वाची त्वारी ने नागत होता होता । वाचा राजधीर स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स्थापन स स्थापन स्यापन स्थापन स्यापन स्थापन स्

पानन करना कुराया है। पारिवार वा अनुभावा, वृक्ष एवं व्यक्ति करित है। प्रतिवार के गराय कुरायां रहे वि आकाओं का पानन करते हैं और दुर्जारा वा वर्षी है। प्रतिवार कर वा स्वयं वे प्रतिवार्धी में क्ष्मी। वर्षी कि प्रतिवार्धी में क्ष्मी। वर्षी कि प्रतिवार्धी में प्रतिवार्धी में क्ष्मी। वर्षी कि प्रतिवार्धी में प्रतिवार्धी में कि स्वयं प्रतिवार्धी में भागार पर नहीं वर्षी व्यक्षी कुल अकार्धी पर वर्षी है।

भूगन में दुरु प्रमान तथा में समाम कायार व्यक्त विश्व दिकार के व्यक्तियों का गाहे हैं।
सहायरिक तामय में हमें पायराज्यों का व्यक्ति विकास के व्यक्तियों का गाहे हैं।
सहायरिक तामय में हमें पायराज्यों का व्यक्ति विकास है। वायराज्य एक अपने
प्रमाससारिक राज्य होने हैं। गाय वर्ष का सायार्थ हैं वाय के निवासों और प्रशासिक में
पालन करना। गाय दी माने गाये हैं— है, लीडिक (सायांत्रिक) और र लेगेना

(यांतिक) । जैन परस्परा में बर्तवान शून ये भी सामुक्ते के तक होने हैं तिरहे तक वा जाता है। प्रत्येक गण (तक्क) के आचार-निवामों में बोड़ा-बहुत करतर भी रहते हैं। गण के निवामों के सनुगार आप एक करता गंचपार्स है। परस्पर कहांगे वर्णा की

प्रांता गण के सरके सारस्य का कर्माय है। जब में स्व कर मक्यवित्व होता है। इब में देग्लालगढ़ परिस्थितियों के आधार पर क्ष्यक्षाया है जा, निवसों ने बनाना भी प्राण्य करवाना गण्यपित का कार्य है। जैन विवसरणा के अनुगार बार-बार गण है। ज्या बाणा माएक होंग पृष्टि से देना गला है। बूळ ने भी सब की जन्मति के नित्ती में प्रतिगारन विद्या है।

७. संययमें—विभिन्न गणी में सिलकर सथ बन्तर है। वीन बाचानों के दर्र प्रमें की प्रमादना संघ या सभा के निवधों के वरिपालन के जब में की है। वर्ष प्र मकार की राष्ट्रीय सब्या है जिनमें विभिन्न कुछ बा नथ मिलकर सामृहिक विनात वो व्यवस्था का निवध करते हैं। भय के नियमों का शास्त्र करना संब के इंग्लेक हरने का कर्नथा है।

जैन परणरा में भंग के तो रूप हैं है, लोकिक मण और रे, जोकींतर ही में कोनिक मंप का कार्य जीवन के भीतिक यहा को व्यवस्थाओं को देवना है, वहीं कोडोत्तर स्वर का कार्य जाणातिक विकास करना है, कोविक क्या हो दा तोशीना संप हो, पार के मार्थेक व्यवस्थ का यह जीवनार्य कार्यक्ष माना वया है कि के सर्वे विषयों का पूरी तरह पालन करें। या में कियों भी प्रकार के मन्यूरा अवसा कर्य के लिए कोई मो कार्य नहीं करें। एकता को जालूक्य क्याये स्थान के लिए कोई से प्रवास्तांत रहे। जैन परणरा के अनुसार खानु, नारको, शावक और व्याविता इस पारों वे किस्तर संव का निर्वास होता है। नग्दीमुक में संव के महरव का वितास-पुत्रक नुस्तर विवेचन हुआ है, निर्वास स्टब्ट हैं कि जैन में नैतिक सापना में संबीध चीवन राग्निना करिक महर्थक हैं।

८ चुत्रपर्य—मासानिक दृष्टि से युउपमें वा ताराये हैं जितल नगरन्या तम्बन्धी तिर्माण नगरन्या तम्बन्धी तिर्माण के वादि के वादि के वादि के वादि के वादि के वादि के वाद के

६ चारितवर्ज-चारितवर्ज का ताल्या है थावन एव वृहरू वर्ष में है आचार-तिनवर्ष हा राविष्ठ का हता। प्रचीन चित्रवर्ष का बहुत हुए हु-, व्य वैतरिवर ताल्या है है, क्यारि काम हामानिक च्यून को है। वैन आदार के नवते यूथ करितवर्ष के में में मानांतर वृद्धि मी है। व्यक्ति मानांतर मानांतर हुए मी है। व्यक्ति मानांतर हामानिक स्वीतिक सर्वत्व के नियह है। अनावह स्थापिक चौरक वे बंबारिक विदेश पूर्व वीत्राह सर्वत्व को सामान्य करता है। इसी प्रवार कर्यावरह सामानिक बौरक में गवह वृद्धि, सर्वत्व और धोराव की मानान्य करता है। चौह्या, अनावह बौर सर्पारवह दूर सामारित जीन, आपार के नियम-वर्णनियम प्रसार और परोक्त कर में सामानिक वृद्धि स्वानह है यह सामा जा सकता है।

१०. ब्रोस्तकायवर्ष-अस्तिकायवर्ष का बहुत कृष्ठ गुन्कन्त्र तस्वयोगांना ते हैं, इट उनका विवेचन यही अप्रार्थिक है ।

हम प्रकार जैन आचारों ने न केवन वैपन्तिक एवं बायग्रीन्तर पूरों के नामण्य में देखार दिया बरनू सामाजिक जीवन पर भी दिवार दिया है। जैन मूत्रों में उपनाच नारपर्म, धारावर्म, राष्ट्रवर्ण बार्टिका चनने हो बाद का रूपट प्रवास है दि जैने बायग्रदक्ति सामाजिक परा का सर्वोचित मूत्रावल करने हुए उसके दिशान वा भी प्रमास करता है।

जैनवमं और सामाजिक बावित्व

मदौर प्राचीन जैन लागन साहित्य में बान-विह सोजिन का विस्तृत दिनेन वर्ग स्वत नहीं है किन्तु उनमें पर-वर कुछ दिनहें [] ऐसे मूच है, जो व्यक्ति के सामाजिक साहित्यों को स्वस्थ करते हैं। जीन बायशे का बोला परकों साहित्य में हुस

१. नन्दीमुत्र-पीठिका, ४-१७

गृहस्य उरागक दोनों से ही। सामाहिक वर्गाएकों की चित्रपूर वर्षों है। सर्ग प्राप्त हो मृति में गामाजिक दारिन्धें की मन्त्री करेंगे ।

भैन मुनि के सामाजिक बावित्य-व्यापि वृति का मुण काप आण्य गामना है दि भी प्राचीन जैन आदयों में तमके जिल निम्न गांगाजिक वार्षिण निर्दित हैं

 भीति भीर वर्षे का प्रकासस—सृति का नर्थ प्रयम सामाजिक पापित्व महें कि बह मगरों या शामों में जाकर कमनापारण की सन्वार्ध का उपदेश देते । आवार्ध में श्वच्ट अप से निरंश है कि बुनि बाम एवं नवर की पूर्व, पश्चित, उत्तर और श्विक रिशाओं में जाकर धनी-निर्धन या ऊँच-नीच का घेड किये विमा तभी की धर्मगर्ग श

उपदेश हैं। इस प्रकार कन नापारण की मैतिक भीवन युवं सदावार की मोर प्रा बरना यह सूनि का प्रथम शामाजिक दावित्व है । वह गमात्र में नैतितता एवं सरावर ना प्रहरी हैं। समाज सर्नतिकता की ओर समार न ही यह देवाना उत्तका दायिन हैं। चूँनि मृति सिशा आदि के अन में श्रीवन निवाह ने सायन सवाज से उपलब्ध वरण है. इसलिए समाज का प्रत्युपकार बदना इसका कर्तश्य है ।

२. यमें की प्रमायना एवं सथ की प्रतिरक्ष की पत्ता-मामान्य का से अप की भीर विशेष रूप से बाचार्य, गणी एव गच्छ नायक का यह अनिवार्य नरीन्य है कि वे हर्द की प्रतिच्या एवं गरिमा को अनुष्य बनाये रहों । उन्हें दूस वात वा स्थान रमना होता है कि सब की प्रतिष्टाका रदाण हो, सब का पराधव न हो, जैनमर्स के प्रति उपी सक वर्ग की आस्था बनी रहे और उसके प्रति शोगों में अध्यक्ष का भाव उलान न हैं। निधीपचूर्णी आदि में उल्लेख है कि अंब की प्रतिच्छा के व्यान निमित्त अपवाद मार्थ का भी सहारा लिया जा सकता है-उडाहरवार्थ मृति के लिए मंत्र-तंत्र करता, कमलार

बताना या तप-ऋदि का प्रदर्शन करना विजय है विन्तु संबहित और धर्म प्रमायना के लिए वह यह सब कर सकता है² । इस प्रकार सब का सरवाण आवश्यक प्रातः वर्षा है वयोशि वह साधना की आधार भूमि है। रे. भिशु भिक्कांत्रयों की श्रेवः एव पश्चिमां---वन मृति का तीसरा सामाविक वायित्व संगत्तेवा है। महावीर एव बुद्ध की ग्रह विश्वेषका है कि उन्होंने सामृहिक सावनी पद्धति का विकास किया और भिंदा संघ वर्ष मिध्युको संघ वैकी रामाजिक संस्थाओं की निर्माण किया । जैनावर्को में प्रत्येक थिहा और मिलुको कर यह अनिवास बतंत्र्य मानी

गपा है कि वे सम्य जिल्लों बीर थिशुंचियों की तेवा एवं परिचयों करें। ब्रवि वे रिसी ऐने बाम या नगर में पहुँचने हैं कि अहाँ कोई रोवी का बुद मिश्र पहले से निवान कर रहा हो तो उनका प्रयम दायित्व होता है कि वे उसकी मधोधित परिवर्ध करें और यह म्यान दशें कि उनके कारण उमें अमुविधा न ही 13 सच ब्यक्स में आवार्स, उपाध्याप, ३, निशीय रेगारेण

१. माचाराय शरा५ २. निगीयकुर्णी १७४३

स्पतिर (बुद्ध-मुनि), रोगी (कान), वायमनरत मवदीखित मुनि, बुक्त, संघ और साधर्मी मो तेवा परिचर्या के विरोध निर्देश दिये गये थे ।

४. नित्तृणी संव का रक्षण—नियोपपूर्ण के अनुनार मृतिसंय का एक अध्य समित्व क्षमे पा कि बढ़ अमामाजिक एवं दुरावारी ओगों में निशृणों गय की रक्षा करं। ऐंडे महागें पर बरि मृति मर्योदा नंग करके वो कोई आवश्य करना पड़ता तो वह तस्य माना लता थां।

५ संघ के बारेगों का वरिवालन—व्ययेक स्थित में तब (नमात्र) सर्वोचित मा । बावार्ष को सप का भावक होता था, उन्हें भी तथ के बारेन का पालन करना होता था। वैदित्तिक साधवा को बयेना भी संघ का हिंद प्रवान भाना प्रया था। सघ के दितों बीर बारेगों को अवपानना करने पर रुष्ट की जी न्यादस्या थी। पेतान्यर साहित्य में यहाँ तक उल्लेख है कि पारतीपुत्र भावता के समय सघ के मादेस की सरमानना करने पर कावार्य भड़बाहु की सघ से बहित्कृत कर देने तक के निर्मेश के निर्मेश के

गृहस्य वर्ग के सामाजिक वायित्व

१. निक्तु-निक्कुनियों में? तेवा—उपातक वर्ग का श्रवम सामाजिक शामित्व मा माहार, अभिषि लाहि के हारा समल वंध में? तेवा करता । अपनी देहिल आवस्यकाओं के पारते में मुनियर्ग शुर्वेत्वा महत्त्वा वर्ष गृहस्यों वा प्राप्तिक नर्मय वा कि वे उनकी पुर आवस्यकाओं को जूति करें। अधिम सामाजि मुहस्यों वा प्राप्तिक नर्मय वा कि वे उनकी पुर आवस्यकाओं को जूति करें। अधिम सामाजि मुहस्यों वा मार्ग माना गमा भा । इस दृष्टि के उन्हें सिक्तु-निक्युक्ती क्य कर 'माता-पिता' नहा नया या सामाजि सामाजि के प्राप्तिक के तिल भी यह स्पष्ट निर्मेश्व वा कि वे गृहस्यों पर मार साम अपने ति के प्राप्तिक प्राप्तिक के प्राप्ति मार्ग म

दे. परिकार को देवा—गुहुत्य का हुशरा सामाजिक वायित्व वसने वृद्ध माता-पिदा, यहंगे, पुनर्नुती आदि परिकारी को तेवा एव परिवर्षा करता है। देवानवर शाहिय के स्थेश स अपने अदि क्षावील करेते हैं के स्थान मह शियों के लिखे के हिम सुनियं के सिंदा का अपने अदि क्षावील करेते हैं के स्थान मह गियों के लिखा था कि अद तक उनके बाता-पिदा को वितर देवें वे संन्यान नहीं लेंगे। मह माता-पिदा के मदि मदि आवता ना मुख्य हों है। यहां द स्थान कि स्थान मिला के पहले आदिवारी कर पर प्रस्ता मिला के के पहले मारिवारी के मदि परिवर्षा में मुख्य के स्थान के के के पहले मारिवारी के महिता देव से में महिता का स्थान के स्थान के स्थान के स्थान के पहले के पहले मारिवारी का मिला देव से में महिता के स्थान के स्

१. निशीयचूर्णी २८९

• र भीन, बीळ और गीता का समाय गाँउ ता, रिटा, पुरु पूर्वी, पटिया पाली की अनुपटि शाल्य रूपट आरम्पर होगा है!

यह पोछे पून मन्त्रा वही है कि बाहित मार्गामिक उत्तरस्विनों से निवृत्त होना है।
उगम यान करें । इस बात की पूजि अन्द्रवृत्तसा के निम्न बस्तरण में होते हैंएक भीतृत्त को यह बात हो गया कि हारिका कर घोड़ की निमान होने बात है ते
गाउँ नहार में बात करना ही कि परि होई माहित मंत्राम केना करना है हैं। पूजि पर
गाउँ नहार में बात करना ही कि प्रविद्या मार्गा प्रवृत्ति हमें गायि का गाउँ गाउँ के मार्ग के ता रहा ही कि प्रविद्या मार्ग प्रवृत्ति हमें गायि का गाउँ भिक्त के को साम में स्वाप्त के गाया गोवण का प्रवृत्ति हमें सहस्त करेंगी। प्राप्ति
पूजि में साम को स्वाप्त के गाया में गाया की साम की साम

बुझ ने बाराब्य ने त्यान के जिए पात्रिकों की सनुपति को आवादगत नहीं तथा। कर करेन पुराने ने राहिकों के समुद्रान के दिका ही स्वय में प्रवीच के पात्र मार्थी सरो चनका रहेता को यह दिश्य कथा दिशा था कि दिनापरिकारों की अर्जुदर्शि कार्याच्या पुरान की को को। तथा पान्नी कही उन्होंने युध्यों के लेकिन कर कर की की स्वय स्थापन की स्वय स्थापन की कार्याच्या प्रवास की की को।

विकास मून कार्याय क्रांतिक - देवाओ बुल्या ति वृत्तिप्रवास दे अन् सामय प्राणी
 केर्य प्रमाद केर्या कार्याव्य वास्तिक विकास स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित कार्या कार्य क्रिया क्रिया कार्य क्रिया कार्य क्रिया कार्य क्रिया कार्य क्रिया क्रिया कार्य क्रिया क्र

का पार विभागत प्रभागित ए संव तरितानता के तारकारिक सर्वासामिक प्राणितिक प्रीमिति क्षेत्र परितर्भित के प्रभागित का स्वासामित हैं जिल्ला के स्वासामित की त्रिती की र का प्रभागित के प्रभागित के प्रभागित की स्वासामित के दिवाला साथिती के प्रभागित के का साथागित का स्वासामित का स्वासामित की स्वासाम

जाक र टे. चेप्पोदक गाय चेप्पचन न न मित्र करते, वरत नाम करने की के प्रदेश के प्रवाद के में ने माधिक जोवन आयोग न मन्यों की मूर्वि न प्राप्त करते हैं प्रियंक उपक्रियर प्रवाद न हे हुए के लिए एस ने हरी

का ता के प्रकार के जार के तिरिया के जिल्ला के साथ हुए के प्राप्ति का निर्देश का ता के प्रकार के जार के तिरिया के जिल्ला के ब्राह्म के ब्राह्म के के निर्देश की निर्देश कि ता ता प्रकार के अपनार के अध्यक्ति हुआ अधिक उनके उत्तरिक्ष के स्वीकरी सीर्पी का केवन करता है। यहाँ जैनवर्ष को निवृत्तियमान दूपिट कोळवुण्य रसते हुए देशाहिन वोशन को आवयपटला का प्रतिपादन किया, पारा है। वेशाहिक नीतन श्री कावस्त्रकार ने देशक मौतन्यसाना की सतुष्टिक के हिल्स व्यतिष्ट कुछ लादि पूर्व भागे का कंडर्ड न करते के लिए भी है। आदिद्याण में यह भी उसनेश हैं कि विवाह न करते हैं मनति का वच्छेर हो जाता है, श्वनवित के उच्छेर के वर्ष का उच्छेद हो जाता है मेटः विवाह मुस्सों का आवित कर्याल हैं।

कैयाहिक कोवन में परस्पर भीति को खावरण काना गया है, यस है जैनमार्थ का स्वाध्यास के अपने कर की स्वीध्यास मान्यास मान्यास में में के की स्वीध्यास मान्यास मान्यास में में की की स्वीध्यास है। विभिन्न के मान्यास मान्यास

वैवाहिक जीवन हे वस्तिन्तियं क्षान सनस्यामें बंदे रिवाह-विक्खेद, रियान-विवाह, प्रिमित्त क्षारिक विविद्-नियंधे के सामान में इसे स्वरूप उन्हेंक की प्राप्त नहीं होते हैं जिन क्षाताहित में इस प्रवृत्तियों की सर्वेद्ध में अवदिव्य माना जाता रहा है। विविद्य नियान क्षाताहित में इस प्रवृत्तियों का मिना होते हैं जोर काताहित में स्वरूप के स्वरूप अवदिव्य माना काता रहा है। व्यवित्य नियान हित स्वर्ण मानाहित के प्रवृत्तियों का मिना होते हैं जोर ना काताहित कर्म हिता विवाह नियान होते हैं। विविद्य नियान क्षाताहित के मुनार क्षात्र के स्वरूपार के स्वरूपार क्षात्र के स्वरूपार के स्वरूपार क्षात्र के स्वरूपार क्षात्र के स्वरूपार के स्वरूपार

बस्तृत: जैतपमं वैर्वास्तक गैतिकता पर वस देवर लामाजिक सम्बन्धों को गुद्ध कीर मपर बनाता है । उसके सामाजिक खाटेय निम्म है →

सैन्स्रों में सन्तर्गक सीवक के जिला वृत

- र को काम में सामान प्रथम हैं अप नामां प्रमान में जैस के में सि
- पुण प्रमाणुराणा क्रम के इस अर्थिक सामित हो। हो। क्षेत्र कर्म के क्षेत्र कर अर्थ करारा है। वै. सामुको साम्यु विकास सामुख्याल क्षार्थ । विकास हुत क्षाप्त करान के सुर्वत प्रकार के विकास
 - . विकास नाम्य विकास प्रमुक्ति कारणे विकास मुद्र व्यक्ति स्थान हे भूति मान है है। सुन्तास
- मूर्ण देवा में वर्ग को मान क्षेत्र क्षेत्र क्षेत्र के मान देवा मान (देव स्वता में मान स्वता में मान
- वक्षों के अपना को निर्माण करते निर्माण करते । अस्ति क्षेत्र क
- म पार मा मा मुख्या तथा पार्ट वर्ष अन्त जी जनके छोड़ अन्त अहे न अन्यापित विकित्त के मानुष्य है उन्हें के प्रमुख्य उन्हें के प्रमुख्य उन्हें के प्रमुख्य उन्हें के प्रमुख्य अनुष्य अ

भैत्रपर्धे में सामाजिक औत्तर के अनुपन्तर सूच

कारनकर्मानम्भ योगमाध्य सर्व वस्त्रकारम् व्यापकारम् से वृत्ति सामक मे गुणै सरह करो तर्व प्रवे अधिवारो से देशन सामाधिक व्यवस्थितम् कान्त्र हो है ---

- है. विकी विकीष प्राणी को अन्ती अन अवस्था अवस्तु साधान्य वर्ती की अनुस्वका में सामक अन बना :
- रे, विभी का कर का अमारा मन करों, किसी में भी अपीड़ी में जीवत काम वर मी. विभी पर सर्वित में अर्थना बोला अप अपी :
- दिनों की आजेरिका म बायक मन बना ।
- प्र, पारम्परिक विश्वाम का अन सह तरों । ज ना विनो पर जसानन क्षण ताथी और मितियों के मून्त रूप्य का अवर सन्दे ।
- ाराम व पूरा राज्य का अवर सन्। ५. मामाजिक भी दत्र से मण्ड समाह सन या, मणवार्ट्स सन मौताओं और दूसरों के परिवादन का ज्याम सन करों।
- ६. अपने स्थापं की निक्चिन्हेनु अनम्य बोलवा यन करा ।
- म तो स्वयं चीरी करो, न चोर को नद्गीय दा लोह न चोरी का मान नरीया।
- व्यवसाय के शेव में नाव-लीक में बामानिकचा बन्ते और वालुओं में मिमानी मत करों।
- ९. राजनीय निपनों का सन्त्रंचन और राज्य के करों का अनुसंचन मन करीं।
- अपने सीन सम्बन्धों में अनेतिक धानरण मन करा । बेश्वर-मनने, देश्वर-मृति पर्व उत्तरे द्वारा धन का अर्थन मत करो ।

- अपनी सम्पत्ति वा वरिसीयन करो और उसे क्षोक हितार्च व्यव करो ।
 अपने व्यवसाय के शेंत्र को सीमित करो और विजित व्यवसाय यत करो ।
- अपने न्यवाय के रात का वात्रक करने आर पानव न्यवाय ना करा।
 अपनी उपयोग सामग्री की मर्यादा करो और उसका अति सम्रह मह करो।
- अपनी उपयोग सामग्री की मर्गादा करों और उसका अति सग्रह मत करो
 वे सभी कार्य यत करों, जिसमें सुम्हारा कोई हित नहीं होता है।
- १५. यया सन्तर अतिथियों की, सन्तवनीं की, पीडित एवं अनहाय व्यक्तियों की सेवा करो । अन्त, सत्त्व, आवान, औपिथ कादि के द्वारा उनको आवश्यकताओं की पृति करो ।
- १६ क्रीय मत करो, सबसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करो ।
- ि. दूसरों की अवमानना मत करों, विनीत बनी, दूसरों का आदर-शम्मान करी ।
- कपटपूर्ण व्यवहार मत करो। दूसरो के अवि व्यवहार में निश्छल एवं प्रामाणिक रही।
- १९. तृष्या मत रक्षो, आस्त्रित मतं बढ़ाओ । २०. ग्याय-मीति से यस उपार्जन करो ।
- रेरै. शिष्ट पुरुषों के आचार की प्रश्न करों।
- २२. प्रशिष्ठ देशाचार का पालन करी।
- रर. प्राप्तद दशाचार का पालन करा। रेश. सदाचारी पहलों की समृति करो।
- रेप. माता-पिता की हेवा-शक्ति करी ।
 - हर, नावानापदा का समान्यापदा करा
- २५, रगई-सगढे और बखेटे पैटा करने वाली अगह से दूर गही, अर्थांत वित्त में सीभ
- उत्पन्न करने वाले स्थान में न रही। २६ आप के अनुसार स्थय करो।
- २७. अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार वस्त्र पहनी ।
- रेंद. धर्म के नाच सर्च-पृष्टवार्च, काम-पृष्टवार्च और मीश-पृष्टवार्चका इन प्रकार क्षेत्रन
 - करों कि कोई किसी का बायक न हो।
- २९. अतिथि और सायु जनों का स्थायोध्य सत्कार करी ।
- रै॰. कभी दुरायह के वंशीभूत न होशे।
- ३१. देश और काल के प्रतिकृत आवरण न करो।
- १२ जिनके पालन-पोपण करने का उसारदायित्व अपने ऊपर हो, उनका पालन-पोपण करो ।
- १३. अपने प्रति किये हुए उपनार को नस्रता पूर्वक स्वीकार करो । १४. अपने सदावार एवं सेवा-कार्य के द्वारा जनता ना प्रेम सम्पादित करो ।
- ३५, लज्जाशील बनी । अनुनित बार्य करने में लज्जा का अनुमय करी ।
- ३६ परोपशर करने में उपव रही। दूसरों की क्षेत्रा करने ना सबसर साने
 - यत हटो।

करना चाशिए । सप्पूरित सुन में सम्होते इस बान यर प्रकाश बाना है कि इनमें में प्रापेक ने प्रति गहरकोशागक के नशा नगंग्य है।

पुत्र के माता विना के प्रति वर्तव्य-(१) इन्होंने मेरा अरण-पोपन विया है अन मुझे इतका मन्य-गोपण करना चाहिए। (२) इन्होंने मेरा कार्य (गेरा) हिगा है अनः मुझे इनका बार्य (मेवा) करना चाहिए। (3) इन्हों। कुल-बंश की कायम रणा है, उसकी रथा की है अत मुझे भी कुरु-त्या की कामम क्लाना काहिए, उनकी स्था करनी चाहिए । (४) इन्होंने मुझे उत्तराधिकार (शयान) प्रदान निया है अन मुझे भी उत्तराजिकार (दायरक) प्रतिपादन करना काहिए (५) मून-प्रेनोंके निमित्त बाब-धान देशा स्वाहित ।

माता-विता का पुत्र पर प्रस्मुपकार---(१) पाप कामी से क्वांते हैं (२) पुष्प कर्म में योजित करते हैं (३) शिला की निज्ञा प्रदान करते हैं (४) योग्य क्त्री में पिताई कराने हैं और (५) उत्तरानिकार बदान करने हैं।

आचार्य (शिक्षक) के प्रति कर्तव्य-(१) उत्पात-उतको अस्टर प्रदान करना चाहिए । (२) उपस्थान-उनकी सेवा में उपस्थित रहता चाहिए । (३) मुमूर्या-उनकी मुखुपा करनी चाहिए। (४) परिचर्या-उनशी परिचर्या करनी चाहिए। (५) विनय पूर्वक शिल्प सीखना चाहिए ।

शिष्य के प्रति धाकार्य का प्रत्युपकार-(१) विनीत बनाने हैं । (२) सुन्दर शिशा प्रदान करते हैं। (३) हमारी विज्ञा परिपूर्ण होगी यह सोवकर सभी शिल्प और सभी खुत विसलाने हैं। (४) मित्र-समात्यों की सुवितपादन करने हैं। (५) दिशा (निया) की सरका करते हैं।

यानी के प्रति पति के कर्तव्य-(१) यत्नी का सम्मान करना वाहिए । (२) उसकी विरस्कार या अवहेलना नहीं करनी चाहिए। (३) परस्त्री यमन नहीं करना चाहिए (इसमें पत्नी का विस्तान बना रहता है)। (४) ऐस्वयं (सम्पत्ति) प्रदान करना बाहिए। (५) वस्त्र-अलेकार प्रदान करना बाहिए।

वति के प्रति कानी का प्रायुवकार-(१) घर के सभी कामी की सम्बक् प्रकार में सम्पादित करती है। (२) परिवन (जीकर-चाकर) को वस में रखती है। (३) दुरा-बरण नहीं बरती है। (४) (पवि द्वारा) मनित सम्पदा की रक्षा करवी है। (५) गृह बाबों में निरालस और दश होती हैं।

् के प्रति कर्तव्य-(१) उन्हें उपहार (दान) प्रदान करना चाहिए। (२)

बोतना बाहिए । (३) अर्ध-वर्षा अर्थात् उनके कार्यों में सहयोग प्रदान

करना पाहिए । (४) उनके प्रति समानता का व्यवहार करना चाहिए । (५) उन्हें विस्ताम प्ररान करना पाहिए ।

नित्र का अध्युषकार —(१) जसनी भूकों से रक्षा करते हैं (क्यांत् सही दिशा निरंत करते हैं)। (२) जसके सम्मत्ति की रखा करते हैं। (३) विपत्ति के समय सरव बदल करते हैं। (४) आपलाक में साथ नहीं छोड़ते हैं। (५) अग्य कोण भी ऐशे (बिन दुन्द) पुरुष का सत्तार करते हैं।

सेश्व के प्रति हशामें के नतंत्र्य—(1) उपनी योण्यता और शमता के अनुसार कार्य केश नाहिए । (२) उसे उनिय कीशन और बेतन प्रदान करना चाहिए ।(६) रोगी होने पर वार्ति हो वेश-भुजूषा करनी चाहिए । (४) उसे उत्तम रहों नांके परार्थ प्रशा करना चाहिए । (५) साथ-समय पर उसे अवकारा प्रशान करना चाहिए ।

देशक का स्वाची के मित मायुक्कार—(१) स्वाची के उटने के पूर्व अपने कार्य करने तथा माने हैं (१) स्वाची के बोने के पत्थल ही सोते हैं। (१) स्वाची द्वारा प्रतास बहु का ही उपनोध करने हैं।(४) स्वाची के बावों को सम्बन्ध प्रकार से मम्पा-रित्र करने हैं।(६) स्वाची को कीर्डि और प्रमान का प्रवाद करते हैं।

समार ब्राह्मों के प्रति कर्तक्य—(१) भेदी प्रावद्भव कास्ति कभी से उनका प्रतु-परमार (विश्व-प्रमान) करना चाहिए। (३) नैतीयाव युवत वास्तिक कर्न से उनका प्रदायक्त करना बाहिए। (३) वेजीयाव पुत्र चार्ताकिक कर्नो से उनका प्रायुक्तवात करता चाहिए। (४) उनकी चान-प्रदान करते हुत छदेव हार सुका रणना चाहिए कर्षाद्द एक देते हुन उदेव तरहर रहता चाहिए। (५) उनहें भोजन बारि प्रदान करना चाहिए।

सन्त काक्षमों का प्रापुणकार—(१) पार नमों से निवृक्त करते हैं। (२) बरवार-नारी कारों में तमाने हैं। (1) बरवार्ग (अनुक्रमा) नरते हैं। (४) अपूर्व (नरीत) जान मुनाने हैं। (५) जूद (बरित) जान को दुइ करते हैं। (६) स्वर्ष का रास्त्र दिवाने हैं।

वैश्विक प्रस्थारा में सामाजिक मर्ग-विश्व कहार देन प्रस्तार हे रहा को बा बर्गन है दुनी प्रवाद वैश्विक रायमा में सनू ने भी हुछ मामादिक सभी वा विश्वन दिया है, भी १, देशपर्म १ व्याडियमें १- हुम्बलं ४, तास्ववस्थामं ५, तमस्य । न्यूष्ट में स्वाद से स्वाद स्व 117

वा अन्ताव करता है। तैन और क्षेत्र परम्पानों के मनान वीदक पानम ते निक भोरत के लिए सकेस विकितियोगी को प्रस्तान करणा करणा करणा करणा सकेस विकितियोगी को प्रस्तुत करणी है। बैरित सक अवुगार मार्शनिता को मेका एवं गामारिक राजिकों को पूरा करना व्यक्ति संस्

प्रशासन का व अध्याप्त का अध्याप का विवास क्या आवास्त्र की है जैरा ह वामाजिक शास्त्रही का निर्वहन व्यक्ति के निर्दा सावस्त्रक सामा यहा है।

A de de de com de री क्ल हैंत हरत है हर क्षा बार्ट । हिंद स्त्राते रिक्ट के इस बाद माँत करन रर हर हर्रकराह्या

10

क्ट स्टारन स्ट्रेशितां

काल का का है।